ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 55 अंक : 11 | सितम्बर 2009 | मूल्य : 10 रुपये

खाद्य सुरक्षा

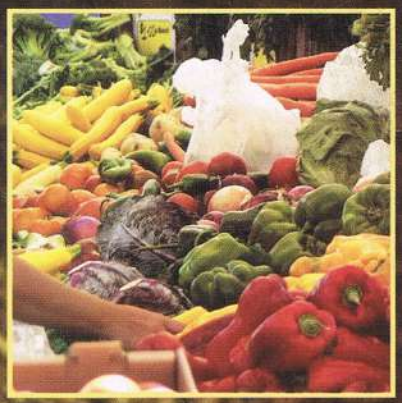

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 15 अगस्त, 2009 को स्वतंत्रता दिवस पर लालकिले की प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित किया। उनके भाषण के मुख्य अंश इस प्रकार हैं-

- विकास के लाभों की समाज के सभी वर्गों और सभी क्षेत्रों एवं देश के सभी नागरिकों तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए प्रयास किया जाएगा।
- भारत का प्रत्येक नागरिक समृद्ध और सुरक्षित हो तथा सम्मान और स्वाभिमान के साथ जीने के लिए समर्थ हो।
- विकास दर को फिर से 9 प्रतिशत पर लाना हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती है। हम आशा करते हैं कि इस वर्ष के अंत तक स्थिति में सुधार होगा।
- इस वर्ष मानसून की बारिश कम हुई है। सूखे की स्थिति से निपटने के लिए हम अपने किसानों को सभी संभव सहायता प्रदान करेंगे।
- किसानों के बैंक ऋण भुगतान की तिथि स्थगित की। लघु अवधि फसल ऋण पर ब्याज के भुगतान के लिए किसानों को अतिरिक्त सहायता दी गई।
- हमारे पास खाद्यान्न के पर्याप्त भंडार हैं। खाद्यान्नों, दालों और दैनंदिन उपयोग की अन्य वस्तुओं की बढ़ती कीमतों पर नियंत्रण के लिए सभी प्रयास किए जाएंगे।
- देश को एक और हरित क्रांति की आवश्यकता है, कृषि में चार प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य है। यह लक्ष्य अगले पांच वर्षों तक प्राप्त कर लिया जाएगा।
- खाद्य सुरक्षा कानून के अंतर्गत गरीबी रेखा के नीचे के प्रत्येक परिवार को हर महीने रियायती दर पर निश्चित मात्रा में खाद्यान्न मिलेगा।
- महिलाओं और बच्चों की जरूरतों का विशेष ध्यान रखा जाएगा। मार्च 2012 तक 6 वर्ष से कम आयु के प्रत्येक बच्चे तक समन्वित बाल विकास सेवा के लाभ का विस्तार किया जाएगा।
- नरेगा कार्यक्रम में सुधार किया जाएगा ताकि इसे अधिक पारदर्शी और जवाबदेह बनाया जा सके।
- देश के प्रत्येक बच्चे को माध्यमिक शिक्षा का लाभ सुनिश्चित करने के लिए एक कार्यक्रम के अंतर्गत इसका विस्तार किया जाएगा।
- बैंक ऋण और छात्रवृत्तियां अधिक–से–अधिक छात्रों को दी जाएंगी ताकि वे अपनी शिक्षा पूरी कर सके।
- आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के छात्रों को कम ब्याज पर शिक्षा ऋण उपलब्ध कराने के लिए नई स्कीम शुरू होगी। इससे तकनीकी और व्यावसायिक पाठयक्रमों में करीब 5 लाख छात्रों को लाभ मिलेगा।
- गरीबी रेखा के नीचे के प्रत्येक परिवार को शामिल करने के लिए राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना का विस्तार किया जाएगा।
- भारत निर्माण कार्यक्रम के लिए अतिरिक्त कोष निर्धारित किया गया है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के विकास के कार्यक्रमों में तेजी लाई जाएगी।
- देश में बुनियादी विकास के लिए तीव्र प्रयास किए जाएंगे। रोज 20 किलोमीटर राष्ट्रीय राजमार्ग बनाया जाएगा।
- जम्मू–कश्मीर और पूर्वोत्तर राज्यों में कार्यान्वित की जा रही सड़क, रेल और विमानन परियोजनाओं की विशेष निगरानी की जाएगी।
- देश को झुग्गी–झोपड़ी मुक्त करने के लिए नई राजीव आवास योजना शुरू की जा रही है।
- 8 राष्ट्रीय मिशनों के जरिए भारत जलवायु परिवर्तन की चुनौती का सामना करेगा।
- जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशन इस वर्ष 14 नवम्बर को शुरू किया जाएगा। यह सौर ऊर्जा के अधिक उपयोग को बढ़ावा देगा और उसे सुलभ बनाएगा।
- जल संग्रह और भंडारण के कार्यक्रमों पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। "जल बचाओ" हमारा एक राष्ट्रीय नारा होना चाहिए।
- सामाजिक और आर्थिक असंतोष के उन कारणों के निराकरण के लिए प्रयास किया जाएगा, जिनसे नक्सलवाद जैसी समस्याएं पनपती हैं।
- हम विकास प्रक्रिया में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के हमारे भाई–बहनों की सक्रिय भागीदारिता चाहेंगे।
- अल्पसंख्यकों के कल्याण की स्कीमों को आगे बढ़ाया जाएगा।
- साम्प्रदायिक हिंसा रोकने के लिए संसद में एक विधेयक पेश किया गया है और जल्द–से–जल्द इसे कानून बनाने के लिए प्रयास किए जाएंगे।
- बालिका भ्रूण हत्या हम सबके लिए शर्म का विषय है। जल्द–से–जल्द हमें इसे समाप्त करना होगा।
- हमारी सरकार महिला आरक्षण विधेयक को जल्द पारित कराने के प्रति वचनबद्ध है।
- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण के लिए एक कानून पर कार्य चल रहा है।
- तीन वर्षों में महिला निरक्षरों की संख्या आधी करने के लिए राष्ट्रीय महिला साक्षरता मिशन शुरू किया जाएगा।
- पिछड़े क्षेत्रों की विशेष जरूरतों का ध्यान रखा जाएगा और क्षेत्रीय असमानता दूर करने के लिए दुगुने प्रयास किए जाएंगे।
- जनता की अधिक भागीदारिता सुनिश्चित करने के लिए पंचायतीराज संस्थाओं के माध्यम से लोक प्रशासन के विकेन्द्रीकरण के लिए नए प्रयास किए जाएंगे।
- सूचना का अधिकार अधिनियम को अधिक प्रभावी बनाया जाएगा और उसकी जवाबदेहिता और पारदर्शिता बढ़ाने के लिए सुधार किया जाएगा।
- ग्रामीण कार्यक्रमों के लिए प्रशासकीय तंत्र को सुदृढ़ बनाने के लिए विशेष प्रयास किए जाएंगे।

(पसूका के सौजन्य से)

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

कुरुक्षेत्र

वर्ष : 55 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48, भाद्रपद–आश्विन 1931, सितम्बर 2009

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द्र मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110 011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

उत्पादन अधिकारी
जे.के. चन्द्रा

व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

❖ विश्व में खाद्यान्न संकट की चुनौतियां	डॉ. जगबीर कौशिक	3
❖ खाद्य सुरक्षा की ओर बढ़ते कदम	प्रो.के.एम.मोदी	8
❖ खाद्य सुरक्षा के समक्ष चुनौतियां	संजीव कुमार मलिक	13
❖ भारत में खाद्य सुरक्षा : एक अवलोकन	डॉ. राजेश कुमार सिंह	18
❖ राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन किसानों की आशा की नई किरण	संगीता यादव	21
❖ मृदा सुरक्षा से ही खाद्य सुरक्षा	डॉ. रमेश कुमार सिंह	24
❖ बाढ़ आपदा के समय खाद्यान्न सुरक्षा	जितेन्द्र द्विवेदी	28
❖ बंजर भूमि का निर्माण और सुधार कार्यक्रम	मधु रानी	32
❖ सूरजमुखी की उन्नत खेती	डॉ. वीरेन्द्र कुमार	37
❖ रेशेदार भोजन खाइये–अच्छा स्वास्थ्य पाइये	डॉ. राज किशोर	42
❖ गया जिले में बदलाव की बयार	प्रवीण कुमार पाठक	45

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय

"हम चाहते हैं कि हमारे देश का कोई भी नागरिक कभी भी भूखा न सोए। इसीलिए हमारा लक्ष्य है कि हम एक खाद्य सुरक्षा कानून बनाएंगे जिसके तहत गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले हर परिवार को हर महीने एक निश्चित मात्रा में रियायती दरों पर अनाज दिया जाएगा। कुपोषण की समस्या का अंत करने का भी हमारा राष्ट्रीय संकल्प है।" 5अगस्त, 2009 को देश के 62वें स्वतंत्रता दिवस पर लालकिले की प्राचीर से डा. मनमोहन सिंह ने यह उद्‌गार व्यक्त किए। प्रधानमंत्री ने कहा –'देश को एक और हरित क्रांति की जरूरत है और हम इस दिशा में भरपूर कोशिश करेंगे।'

वर्तमान में हमारा देश खाद्य समस्या से जूझ रहा है। देश में खाद्यान्नों के उत्पादन में आशानुकूल वृद्धि नहीं होने के कारण खाद्यान्नों की मांग और पूर्ति में अंतर बढ़ता जा रहा है जिस वजह से खाद्यान्नों की कीमतें लगातार बढ़ रही हैं। इस वर्ष मानसून में भी कुछ कमी आई है जिसका कुछ विपरीत प्रभाव तो फसलों पर पड़ेगा ही। हालांकि भारतीय खाद्य निगम के अनुसार उसके पास गेहूं का इतना स्टॉक है जो अगले दो साल के लिए पर्याप्त है।

देश की समस्त जनसंख्या को 'खाद्य सुरक्षा' प्रदान करने के लिए खाद्य की भौतिक उपलब्धि आवश्यक है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त खाद्य उपलब्धता हेतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही भारतीय नियोजकों ने खाद्यान्नों के संदर्भ में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। देश में कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए कई नए कार्यक्रम और योजनाएं शुरू की गई। 1960 के दशक में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के नेतृत्व में हरितक्रांति की शुरूआत इस दिशा में सबसे सार्थक और कारगर कदम था।

इस समय गरीब और बेसहारा लोगों को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने हेतु सरकार कई कार्यक्रम चला रही है जिनमें सार्वजनिक वितरण प्रणाली, लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली, अन्त्योदय अन्न योजना और अन्नपूर्णा योजना आदि प्रमुख हैं। मजदूर वर्ग को खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने के उद्‌देश्य से सरकार ने वर्ष 2004 में 'काम के बदले अनाज' योजना भी शुरू की जिसे बाद में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना में समन्वित कर दिया गया।

भारत सरकार ने देश में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वर्ष 2007 में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन की भी स्थापना की है। यह मिशन बेहद कामयाब साबित हो रहा है। इस योजना के लिए 11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 4882.48 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। योजना के तहत किसानों को बैंकों से ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। 'खाद्य सुरक्षा' के दृष्टिकोण से इस समय देश में सहकारी समितियां भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। तमिलनाडु में 94 प्रतिशत राशन की दुकानें सहकारी समितियों के द्वारा संचालित की जा रही हैं। हाल ही में सरकार ने खाद्य सुरक्षा की चुनौतियों से निपटने के लिए एक उच्चस्तरीय मंत्रिमंडलीय समिति का भी गठन किया है।

सरकार के पुरजोर प्रयासों के बावजूद बढ़ती जनसंख्या और उत्पादन में उस अनुपात में वृद्धि न होने के कारण हम अभी भी 'सभी को भोजन' के लक्ष्य से कोसों दूर हैं। सुविख्यात कृषि वैज्ञानिक डा. एम.एस. स्वामीनाथन के अनुसार बढ़ती जनसंख्या के चलते अनुमानतः आज जो बच्चा पैदा होगा उसके लिए 0.08 हेक्टेयर भूमि उसके आवास, विद्यालय, सड़क आदि सुविधाओं के लिए तथा 0.4 हेक्टेयर भूमि खाद्यान्न, फल–सब्जी आदि उगाने के लिए आवश्यक होगा। इस गणना के आधार पर भारत में लगभग 55 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि की आवश्यकता प्रत्येक वर्ष होगी।

देश में खाद्य संकट के लिए जलवायु परिवर्तन भी जिम्मेदार है। आईपीसी की रिपोर्ट में यह संकेत दिया गया है कि तापमान वृद्धि के कारण वर्षा चक्र में अनियमितता आ गई है जिससे भारत में अनाज का उत्पादन घटने की संभावना है। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार ने 8 राष्ट्रीय मिशन बनाने का फैसला किया है।

इन तमाम चुनौतियों के बीच सभी नागरिकों को खाद्य सुरक्षा का लक्ष्य आसान नहीं है। फिर भी हमें उम्मीद है कि सरकार द्वारा कृषि उत्पादन बढ़ाने की दिशा में उठाए जा रहे कदम सार्थक होंगे। एक तरफ हम कृषकों के गैर–कृषि क्षेत्रों की तरफ पलायन को रोकने में कामयाब हो पाएंगे तो दूसरी तरफ किसानों के जैव ईंधन फसलों की ओर बढ़ते रूझान पर भी काबू पा सकेंगे। चूंकि खाद्य उत्पादन बढ़ाना ही सभी नागरिकों के लिए 'खाद्य सुरक्षा' सुनिश्चित करने की दिशा में सार्थक कदम हो सकता है ।

विश्व में खाद्यान्न संकट की चुनौतियां

डॉ. जगबीर कौशिक

आज हम जिस खाद्यान्न संकट की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, वह न तो किसी एक व्यक्ति, एक गांव, एक राज्य या एक देश की समस्या है अपितु यह विश्व के अधिकतर देशों की समस्या है, बेशक इसके कारण अलग-अलग हो सकते हैं। इसके लिए कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ जिम्मेदार है। सबसे पहले हमें जिस महत्वपूर्ण तथ्य पर सोचना होगा, वह यह है कि जिस खाद्यान्न संकट के कारण करोड़ों लोगों की जिंदगी पर बन आई है, क्या वह खत्म होगा? या समय के साथ बढ़ता जाएगा? इन दोनों सवालों का जवाब 'हां' हो सकता है।

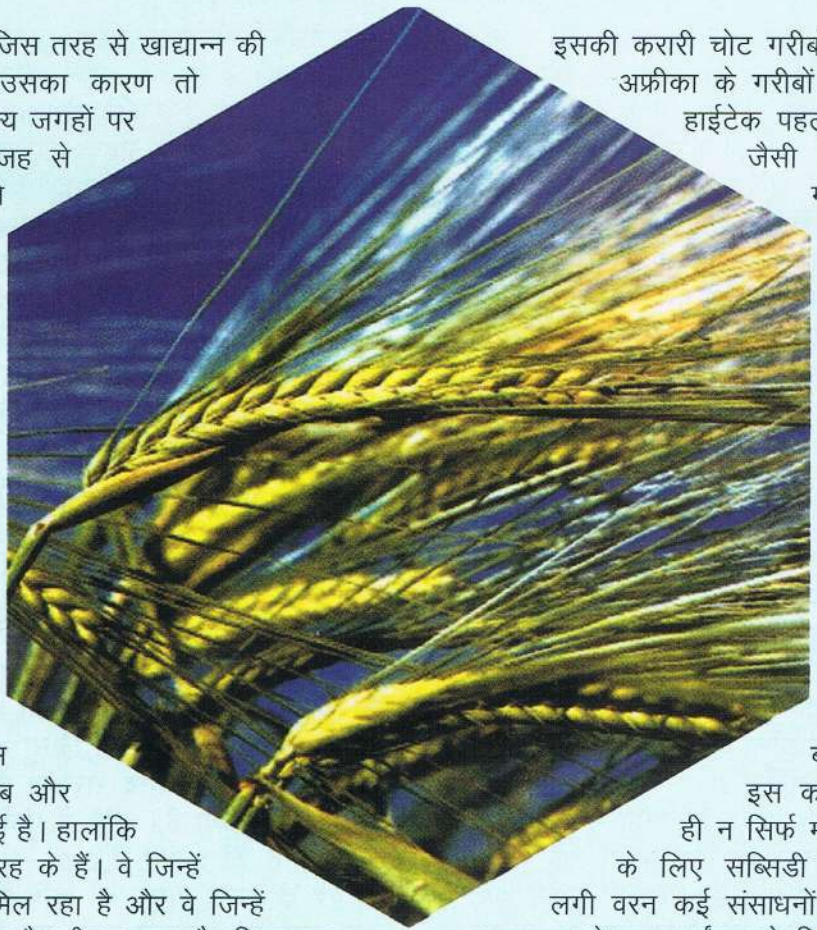

फिलहाल दुनिया में जिस तरह से खाद्यान्न की कीमतें बढ़ी हैं, उसका कारण तो आस्ट्रेलिया, यूक्रेन और अन्य जगहों पर पड़ा सूखा है। इसकी वजह से पैदा हुई समस्या से निपटने के लिए तुरंत ही जोरदार राहत अभियान चलाया जाना चाहिए, जिससे मौजूदा संकट निपट जाए। लेकिन इसके ठीक नीचे एक मूलभूत समस्या है जिसे अगर हमने नहीं पहचाना और जिसका हल नहीं निकाला तो यह समस्या गहराती ही जाएगी।

समस्या यह नहीं है कि उत्पादन कम हो रहा है। समस्या यह है कि मांग बढ़ रही है। यह बहस विश्व अर्थव्यवस्था के गरीब और अमीर की बहस में बदल गई है। हालांकि दुनिया के गरीब भी दो तरह के हैं। वे जिन्हें तेज तरक्की का फायदा मिल रहा है और वे जिन्हें इसका फायदा नहीं मिल रहा है। चीन, भारत और वियतनाम जैसे देशों की अर्थव्यवस्थाओं के विस्तार से खाद्यान्न की मांग तेजी से बढ़ रही है। निश्चित रूप से अपने आप में यह एक अच्छी बात है। अगर विकास करने वाले देश अपने भीतर विकास के असंतुलन को ठीक कर लें तो अभी जिन तक इसका फायदा नहीं पहुंचा है, वे भी ज्यादा अच्छा खाने की स्थिति में होंगे। लेकिन यह विकास विश्व खाद्यान्न बाजार पर भी दबाव बना रहा है। इस बढ़ती मांग के लिए कभी आपको खाद्यान्न का आयात करना पड़ता है और कभी घरेलू बाजार में कीमतों को नीचा रखने के लिए निर्यात पर पाबंदी लगानी पड़ती है। हाल के दिनों में भारत, चीन, वियतनाम और अर्जेंटीना को यही करना पड़ा है और इसकी करारी चोट गरीबों पर पड़ी है, खासतौर पर अफ्रीका के गरीबों पर। इस समीक्षा का एक हाईटेक पहलू भी है। मकई और सोया जैसी कृषि उपज का इस्तेमाल मोटर कार का ईंधन बनाने के लिए भी किया जाने लगा है। इसलिए अब भूखे पेट का कंपीटीशन ईंधन के टैंक से भी होने लगा है।

सरकारों की खराब नीतियों ने भी इस आग में घी डाला है। 2005 में अमेरिकी कांग्रेस ने ईंधन के लिए एथेनॉल के इस्तेमाल का कानून बना दिया था। इस कानून के साथ ही न सिर्फ मकई की खेती के लिए सब्सिडी भी दी जाने लगी वरन कई संसाधनों का इस्तेमाल खाद्यान्न के बजाय ईंधन के लिए होने लगा। एथेनॉल का इस्तेमाल न तो ग्लोबल वार्मिंग को रोक सका और न ही पर्यावरण प्रदूषण को कम कर सका। अब अमेरिकी राजनीति अगर इसकी इजाजत दे तो हालात को सुधारने के लिए कानून बनाने और सब्सिडी देने के बजाय इसके इस्तेमाल में कटौती करनी होगी।

ग्लोबल वार्मिंग से भी समस्या बढ़ी है। पर्यावरण में बदलाव से भविष्य में कृषि के लिए दिक्कतें खड़ी हो सकती हैं। अच्छी बात यह है कि जनसंख्या में वृद्धि की दर कम हो रही है और औरतों के

सशक्तिकरण के जरिए इसे और कम किया जा सकता है। इस सशक्तिकरण के लिए और चीजों के अलावा लड़कियों के लिए स्कूली शिक्षा का विस्तार भी जरूरी है।

इस समय सबसे बड़ी चुनौती ऐसी असरदार नीतियों को खोजने की है जो विश्व अर्थव्यवस्था के तेजी से हुए विस्तार से पैदा असंतुलन से निपट सकें। जिन देशों का विकास काफी धीमी गति से हो रहा है, वहां घरेलू आर्थिक सुधार शुरू करने की बहुत ज्यादा जरूरत है लेकिन इसी के साथ बड़े पैमाने पर विश्व स्तर के सहयोग और तालमेल की भी जरूरत है। लेकिन सबसे पहला काम है समस्या को समझने का।

यह एक हकीकत है कि जब से स्कूलों में बच्चों के लिए दोपहर के खाने की व्यवस्था हुई है, छात्रों की संख्या में वृद्धि हो गई है। स्पष्ट है, शिक्षा नहीं, भूख ही प्रेरित कर रही है ग्रामीण इलाकों में बच्चों को स्कूल जाने के लिए। सही है कि अब अकाल जैसी स्थितियों में लोगों के मरने की सामूहिक घटनाएं पहले की तुलना में बहुत कम होती हैं लेकिन सही यह भी है कि स्वतंत्र भारत में अपर्याप्त भोजन के शिकार होने वालों की संख्या भी कम नहीं है। हर साल देश के किसी न किसी हिस्से से इस आशय की खबरें आ ही जाती हैं या लोगों को पूरा भोजन नहीं मिल रहा या लोग दिन में एक बार खाना खा पा रहे हैं, अथवा लोगों को घास खाकर पेट भरना पड़ रहा है। इस हालात में संसद के गलियारों में इस तरह की आहटें सुनाई देना कि भोजन को नागरिकों का मौलिक अधिकार माना जाना चाहिए, किसी ठंडी हवा के मीठे झोंके जैसा लगता है।

जिस देश की आधी आबादी गरीबी की रेखा से नीचे का जीवन जी रही हो, बेरोजगारी जहां की हकीकत हो, जहां चिकित्सा पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीडीपी) का एक प्रतिशत भी खर्च न होता हो, वहां सामाजिक सुरक्षा के उचित एवं पर्याप्त प्रावधानों का न होना चिंता की बात होनी चाहिए। यह सही है कि गरीबों को खाना देने की कई योजनाएं अर्से से हमारे यहां चल रही हैं, घटी दरों पर खाद्यान्न देने के कार्यक्रम भी होते रहते हैं, राशन की व्यवस्था भी है लेकिन इस सबके और तमाम हरित–क्रांतियों के बावजूद हकीकत यह है कि लोग भूख से मरते हैं। भंडारों में खाद्यान्न हैं लेकिन न वह जरूरतमंदों तक पहुंचता है, न जरूरतमंद उस तक पहुंच पाते हैं। भला हो सुप्रीम कोर्ट का जिसने सन् 2001 में इस आशय के निर्देश दिए थे कि सरकारें खाद्यान्न के संदर्भ में दी गई सुविधाएं वापस नहीं ले सकती। तभी न्यायालय ने बच्चों को स्कूलों में पका हुआ भोजन देने, छह साल से कम उम्र के बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं को अतिरिक्त पोषक भोजन देने, गरीब वर्ग के सभी लोगों को राशन कार्ड देने की बात कही थी।

यह सब जरूरी और उपयोगी होते हुए भी पर्याप्त नहीं है और न ही इस बात की कोई गारंटी है कि हर भूखे का पेट भरेगा। किसी भी सभ्य और प्रगतिशील समाज में ऐसी गारंटी जरूरी है। सच तो यह है कि इस गारंटी के बिना स्वतंत्रता भी आधी–अधूरी है। अब जब भोजन के अधिकार का कानून बनाने की सुगबुगाहटें हो रही हैं तो इस बात को रेखांकित करना जरूरी है कि देश के संसाधनों पर पहला अधिकार उनका बनता है जो सबसे कमजोर हैं, सबसे गरीब हैं। देश को आज एक ऐसे भोजन के अधिकार वाले कानून की आवश्यकता है जो सरकारों के लिए बंधनकारी हो और यह सुनिश्चित करता हो कि कोई देशवासी भूखा नहीं सोएगा। यहां सवाल सिर्फ पेट भरने का ही नहीं है, सवाल समुचित पोषक तत्वों का शरीर में पहुंचने का भी है, ताकि शरीर इतना स्वस्थ बने कि व्यक्ति रोटी कमाने के लायक बन सके। अपेक्षित कानून में इस बात की गारंटी होनी चाहिए कि न केवल सबको पर्याप्त भोजन मिलेगा बल्कि सबको पर्याप्त भोजन अर्जित करने का अवसर भी उपलब्ध कराया जाएगा।

हालांकि अभी तक दुनिया के बहुत कम देशों में इस संदर्भ में कानून बने हैं लेकिन इसकी जरूरत सभी जगह महसूस की जा रही है। जब हम जीने के अधिकार की बात करते हैं तो प्रकारांतर से वैयक्तिक एवं सामाजिक सुरक्षा को ही रेखांकित करते हैं। भोजन का अधिकार देने का मतलब सबको सस्ती दरों पर कुछ अनाज मुहैया करा देना ही नहीं है, इसका अर्थ बेहतर जिंदगी की गारंटी देना है। सब स्वस्थ हों, शिक्षित हों, जीविका उपार्जन में समर्थ हों, इसके लिए उन स्थितियों का निर्माण जरूरी है, जिनमें यह सब संभव हो सकता है। भोजन का अधिकार देना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम होगा।

इस संदर्भ में जो भी कानून बने, उसमें उसके क्रियान्वयन की गारंटी भी जरूरी है। हर घर से भूख मिटाने की जिम्मेदारी जिनकी हो, उन्हें जिम्मेदारी न निभाने के लिए दंडित भी किया जा सके, ऐसी व्यवस्था भी जरूरी है जिसमें सबको खाना मिले, सब खाना कमाने लायक बने, सब स्वस्थ रहें। वस्तुतः यह स्थिति सच्ची स्वतंत्रता की दिशा में बड़ी कारगर होगी।

खाद्यान्न सुरक्षा से पहले कृषि की बात हो:– सब जानते हैं कि कृषि का विकास हुए बिना खाद्यान्न संकट का समाधान नहीं हो सकता। पिछले वर्ष भारत ही नहीं अपितु पूरी दुनिया आर्थिक संकट में घिरी रही किन्तु अब कृषि क्षेत्र के लिए एक अच्छी खबर है कि केन्द्र सरकार ने इस क्षेत्र के लिए निवेश का प्रावधान किया है। कृषि में पूंजी का हिस्सा 2001–02 के 6.7 प्रतिशत की तुलना में 2007–08 में 8.4 प्रतिशत रहा और इस वर्ष के बजट भाषण को कृषि विकास के लिए संकेत मान लिया जाए तो अनुकूल तथ्य यह है कि उसमें राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के लिए 30 प्रतिशत की वृद्धि की गई है।

अलघ समिति द्वारा दिए गए पोषकता आधारित उर्वरक सब्सिडी के विचारों और अभिजीत सेन समिति द्वारा दिए गए तथ्यों को बजट में समाहित किया गया है। यह अच्छा लक्षण है किन्तु इसका मतलब पोटाश एवं फास्फोटिक उर्वरकों की कीमत में कमी आना और नाइट्रोजन की कीमत बढ़ना निश्चित है। उर्वरक मूल्यों सम्बन्धी रिपोर्ट में सिफारिश की गई है कि सबसे पहले उर्वरकों पर सब्सिडी उन जिलों में दी जाए, जहां कृषि एवं उर्वरक सहकारी समितियों का मजबूत आधार है तथा बाद में इसका विस्तार किया जाए। उर्वरकों की आपूर्ति के साथ ही हमें

कृषि विकास को ध्यान में रखते हुए सिंचाई, बिजली, बीज, उपकरणों, ऋण, निवेश, कृषि सम्बन्धी परामर्शी सेवाओं आदि के बारे में भी सोचना होगा। यद्यपि कृषि जोतों का आकार घट रहा है, फिर भी यदि उपर्युक्त योजनाओं के आधार पर हम कृषि उत्पादकता बढ़ाने में कामयाब हो गए तो खाद्यान्न संकट का समाधान करना आसान हो जाएगा।

जलवायु परिवर्तन के एजेंडे में खेती शामिल हो:– जलवायु परिवर्तन पर क्योटो समझौता साल 2012 में समाप्त होने वाला है। इस समझौते का स्थान कौन लेगा, इस बारे में जर्मनी के शहर बोन में गहन वार्ता शुरू हो रही है। विशेषज्ञों का विचार है कि इन वार्ताओं के एजेंडे में कृषि को मुख्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। उनका तर्क सरल है कृषि जलवायु परिवर्तन पर असर डालती है और खुद भी वह इससे प्रभावित होती है और वह इसके प्रतिकूल असर को नाकाम करने के लिए सकारात्मक योगदान भी दे सकती है।

कृषि के लिए अभियान स्पष्ट तौर पर अंतिम समझौते में परिलक्षित होगा, जिसकी पहल अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान (कृषि नीति की बाबत वैश्विक थिंक टैंक– आईएफपीआरआई) ने की थी। इसने क्रमिक रूप से कई नीतिगत बातें कही हैं, जिसमें कहा गया है कि जलवायु परिवर्तन का सामना करने के लिए कृषि का महत्व समझा जाना चाहिए और इसके बुरे प्रभावों से बचाने के लिए कृषि को सक्षम भी बनाया जाना चाहिए।

जैसा कि आईएफपीआरआई के महानिदेशक जे.वी. ब्राउन ने इन प्रपत्रों में से एक में रेखांकित किया है कि विश्व में तापमान बढ़ाने वाली ग्रीन हाउस गैस (जीएचजी) के सालाना उत्सर्जन में कृषि का योगदान 13.5 फीसदी और जोड़ देता है। इस तरह से कृषि जहां जलवायु परिवर्तन की समस्या में योगदान देती है वहीं इसके समाधान का भी हिस्सा है क्योंकि यह कार्बन को अलग कर जीएचजी गैस के उत्सर्जन को कम करने का शानदार मौका मुहैया कराती है।

जरूरत इस बात की है कि कृषि विज्ञान व तकनीक पर ज्यादा निवेश किया जाए ताकि लागत के लिए प्रभावी तकनीक की खोज हो सके। ऐसी खोज से न सिर्फ किसानों को मौसम की भविष्यवाणी के बारे में बताया जाएगा बल्कि बदलते मौसम को देखते हुए फसल और इससे जुड़े पैटर्न में भी बदलाव लाया जा सकेगा ताकि उत्पादन पर इसका असर न पड़ पाए। ऐसी फंडिंग के अलावा जीएचजी गैस उत्सर्जन को रोकने के लिए भी तकनीक की खोज करने की दरकार है, खासतौर से मीथेन गैस के लिए, जोकि धान के बड़े खेत और भैंस जैसे जुगाली करने वाले जानवरों आदि से निकलती है।

यह चिंता का विषय है कि सकल पूंजी निर्माण में कृषि की हिस्सेदारी (1999–2000 की कीमत पर) साल 2004–05 में 7.7 फीसदी थी जो साल 2005–06 में गिरकर 7.2 फीसदी पर आ गई। साल 2006–07 में इसमें और गिरावट दर्ज की गई और यह 7 फीसदी पर जाकर टिकी। वास्तव में महत्वपूर्ण यह है कि इस गिरावट की वजह सकल पूंजी निर्माण में निजी क्षेत्र की हिस्सेदारी में आई कमी है। इससे पहले वाले सालों में रुझान ठीक उल्टा था।

चूंकि विभिन्न क्षेत्रों में सकल पूंजी निर्माण की विकास दर इन क्षेत्रों में ताजा निवेश की दिशा का संकेत देती है, लिहाजा कृषि क्षेत्र में निजी क्षेत्रों की तरफ से सकल पूंजी निर्माण में कमी बेचैनी पैदा करती है। यह साफ संकेत है कि किसान (कृषि क्षेत्र में निजी निवेश के मुख्य भागीदार) और निवेश की क्षमता हासिल करने में नाकाम रहे, बावजूद इसके कि सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर में कृषि क्षेत्र की ठीक–ठाक भागीदारी थी। इसके कई कारण हैं। इस दौरान थोक व खुदरा दोनों बाजारों में हालांकि कृषि जिंसों की कीमतें ऊंची रहीं, पर किसानों को खुदरा कीमतों

का आधे से भी कम मिला। इसने कृषि की लाभदायकता पर विपरीत असर डाला है। नेशनल सैंपल सर्वे ऑर्गनाइजेशन (एनएसएसओं) ने पाया है कि 40 फीसदी किसानों ने खेती छोड़ने की इच्छा जताई है। जहां 27 फीसदी इसे घाटे का सौदा बता रहे हैं, वहीं 8 फीसदी इसे जोखिम भरा मानते हैं। न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) कुछ ही फसलों के उत्पादकों के लिए उपलब्ध है मसलन गेंहू, चावल और कुछ हद तक कपास के लिए। और ये भी कुछ ही राज्यों में उपलब्ध हैं जहां सरकारी एजेंसी कृषि बाजारों में संचालन करती हैं। बाकी जगह किसानों को सामान्यतः अपना उत्पाद एमएसपी से कम कीमत पर बेचना पड़ता है। यहां तक कि आर्थिक समीक्षा में स्वीकार किया गया है कि उत्पादकों की कीमत और उपभोक्ता कीमत के बीच की खाई को संकीर्ण करने की दरकार है। कृषक समुदाय के ज्यादातर लोगों की कृषि क्षेत्र में निजी निवेश बढ़ाने के लिए जरूरी सस्ते) ऋण तक आसान पहुंच नहीं है। वित्तीय समावेशन समिति की रिपोर्ट (जनवरी 2008) में इस बात का खुलासा हुआ है कि 73 फीसदी से ज्यादा किसान परिवारों की पहुंच सस्ते ऋण के पारंपरिक स्रोत तक नहीं है।

लोकलुभावन कदमों मसलन कर्ज माफी के बदले ज्यादा से ज्यादा किसानों को संस्थागत क्रेडिट नेटवर्क से जोड़े जाने की दरकार है। इससे न सिर्फ साहूकारों से उनका बचाव हो सकेगा बल्कि उत्पादकता बढाने वाले कदमों में उनके निवेश की क्षमता में सुधार होगा। इसके अतिरिक्त जोखिम कम करने वाले तंत्र की गैर–मौजूदगी मसलन फसली बीमा, ऑप्शन ट्रेडिंग और इस तरह के दूसरे इंतजाम के अभाव में किसानों के पास काफी कम बचता है और यही वजह है कि वे कृषि जैसे खतरनाक उद्यम में निवेश नहीं बढ़ा सकते।

एनएसएसओ के सर्वेक्षण में बताया गया है कि सिर्फ चार फीसदी कृषक परिवारों ने ही अपनी फसलों का बीमा करवाया। 57 फीसदी किसान तो यह भी नहीं जानते कि फसलों का बीमा भी करवाया जा सकता है। आर्थिक रूप से व्यवहार्य और निवेश के लिहाज से कृषि क्षेत्र में नई तकनीक की शुरूआत आवश्यक है। हालांकि सूचना पाने के लिए किसान नई तकनीक एक्सेस नहीं कर सकते। एनएसएसओ के सर्वेक्षण के मुताबिक, सिर्फ तीस फीसदी किसानों ने सर्वेक्षण वाले साल में नई तकनीक अपनाई। जब तकनीकी सूचना की बात आती है तो सिर्फ छह फीसदी किसान विभिन्न एजेंसियों पर भरोसा करते हैं जबकि सिर्फ तीन फीसदी सरकारी एजेंसियों पर।

खाद्य उत्पादन की आउटसोर्सिंग की अपेक्षा नई अवधारणा निवेशकर्ता देश की तो खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करेगी, लेकिन मूल देश की जनता को भूख, भुखमरी और खाद्य संकट की विभीषिका में झोंक देगी। ये कंपनियां अति सघन खेती करेंगी, जिसका पर्यावरण पर बेहद घातक प्रभाव पड़ता है। मेजबान देश के पल्ले पड़ेगी मिट्टी की गिरी हुई उर्वरता, भूमिगत जलस्तर में कमी और रसायनों की भरमार से विषैली बनी धरा। यह पूरी दुनिया में चल रहा है। भारत की बात करें तो कर्नाटक में इस प्रयोग की शुरूआत होने जा रही है। खेती वाली भूमि की खरीद पर लगा नियंत्रण ढीला करके प्रदेश निवेश आकर्षित करने का खतरनाक प्रयास कर रहा है। यहां निवेश के लिए 15 कंपनियां तत्पर हैं। इनमें सार्वजनिक क्षेत्र की स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन के अलावा कुछ बड़ी निजी कंपनियां शामिल हैं। पैरागुवे, उरूग्वे और ब्राजील में पहले ही दस हजार हेक्टेयर जमीन में मुख्यतः सोयाबीन और तिलहन के उत्पादन के लिए विदेशी कंपनियों ने भूमि पट्टे पर लेने की प्रक्रिया शुरू कर दी है।

भारतीय कंपनियां भी दलहन उत्पादन के लिए म्यांमार में प्रवेश कर रही हैं। इसके अलावा इंडोनेशिया में तेल उत्पादन के लिए पाम के पेड़ खरीदे जा रहे हैं। इसके बाद खरीदारी की सूची में आस्ट्रेलिया और कनाडा हैं। कृषि संपदा से संबंधित राष्ट्रीय कानूनों को संशोधित किया जा रहा है। खाद्य एवं कृषि मंत्रालय खेती की आउटसोर्सिंग के पक्षधर हैं। रिजर्व बैंक वर्तमान कानूनों में बदलाव कर रहा है ताकि विदेशों में कृषि भूमि खरीदने की अनुमति प्रदान करने के अनुकूल कानून संशोधित किए जा रहे हैं। खाद्य संकट की तीव्र वेदना झेल रहे पाकिस्तान में प्रधानमंत्री यूसुफ रजा गिलानी ने मध्य जून में सऊदी अरब के दौरे से लौटने के बाद अति उत्साह का परिचय दिया। खबर है कि विदेशी निवेश की जबरदस्त तंगी के कारण उन्होंने लाखों एकड़ उर्वर भूमि बेचने की पेशकश कर डाली। इस बीच कतर पाकिस्तान के पंजाब में कृषि भूमि खरीदने की तैयारी कर रहा है जिसके लिए करीब 25 हजार गांवों के किसानों को बेदखल होना पड़ेगा। सऊदी अरब भी इंडोनेशिया के मेरोके में 16 लाख हेक्टेयर कृषि संपदा हासिल करने की योजना बना रहा है। यहां चावल का उत्पादन कर वह वापस अपने देश मंगाएगा।

विदेश में जमीन खरीदने के इच्छुक देशों में सऊदी अरब अकेला नहीं है। गल्फ कारपोरेशन काउंसिल का गठन किया जा चुका है, जिसके सदस्यों में सऊदी अरब, बहरीन, कुवैत, कतर, ओमान, जार्डन और संयुक्त अरब अमीरात शामिल हैं। ये निवेश पर लाभ के बदले विदेशों में जमीन की खोज कर रहे हैं। एशिया में लाओस, इंडोनेशिया, फिलीपींस, वियतनाम, कंबोडिया, पाकिस्तान, थाईलैंड और म्यांमार, मध्य एशिया और यूरोप में यूक्रेन, कजाकिस्तान, जार्जिया, रूस और टर्की तथा अफ्रीका में सूडान व उगांडा में पहले ही भूमि संबंधी करार किए जा चुके हैं। इन देशों को अहसास हो गया है कि तेल आय लोगों का पेट नहीं भर सकती। हालिया वैश्विक खाद्य संकट में सुपर मार्केटों से खाद्यान्न गायब हो गया था। इसलिए खाड़ी देश भविष्य में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के इरादे में निवेश कर रहे हैं। जमीन हथियाने में चीन मुख्य खिलाड़ी बन गया है। आबादी को खेती से हटाकर शहरों में ले जाने की बढ़ रही प्रक्रिया के चलते अब चीन विदेशों में भूमि खरीदने की गतिविधि में बढ़–चढ़कर भाग ले रहा है।

स्पष्ट है कि खाद्य पदार्थों की राजनीतिक अर्थव्यवस्था फिर से लिखी जा रही है। निःसंदेह इसके गंभीर नतीजे निकलेंगे।

खाद्य सुरक्षा पर मंत्रिमंडलीय समिति

प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने खाद्य वस्तुओं के स्टॉक के रखरखाव और प्रबंधन, खाद्यान्नों के केन्द्रीय निर्गम मूल्यों में बदलाव और खाद्य सुरक्षा के प्रस्तावित कानून पर रणनीति निर्धारित करने के लिए एक मंत्रिमंडलीय समिति गठित की है । आठ सदस्यों की इस समिति में वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी, कृषि और खाद्य मंत्री शरद पवार, रक्षा मंत्री ए.के. एंटनी, गृहमंत्री पी. चिदंबरम, रेलमंत्री ममता बैनर्जी, कपड़ा मंत्री दयानिधि मारन, वाणिज्य और उद्योग मंत्री आनंद शर्मा और ग्रामीण विकास तथा पंचायती राज मंत्री सी.पी. जोशी शामिल हैं। योजना आयोग के उपाध्यक्ष डा. मोंटेक सिंह आहलूवालिया विशेष आमंत्रितों में शामिल रहेंगे।

विश्व में खाद्यान्न का घटता उत्पादन:– पूरी दुनिया में वर्ष 2009–10 के दौरान कृषि क्षेत्र में कमी होने के कारण बड़े पैमाने पर खाद्यान्न उत्पादन घटने की संभावना व्यक्त की जा रही है। कम निवेश में अच्छा रिटर्न मिलने की उम्मीद में लोगों का झुकाव खाद्यान्नों की बजाय तिलहनों की ओर बढ़ रहा है। यू एन फूड एण्ड एग्रीकल्चर आर्गनाइजेशन (एफ ए ओ) के हाल ही में जारी हुए विश्लेषण के अनुसार वर्ष 2008 की तुलना में वर्ष 2009 के दौरान विश्व खाद्यान्न उत्पाद 3 प्रतिशत तक घट सकता है।

खाद्यान्न उत्पादन में सबसे ज्यादा कमी विकसित देशों में देखने को मिल रही है जहां 6 प्रतिशत तक गिरावट आ सकती है जबकि विकासशील देशों में खाद्यान्न उत्पादन में गिरावट मात्र 0.7 प्रतिशत होने का अनुमान व्यक्त किया जा रहा है।

कृषि क्षेत्र में सुधारों के बीज:– आने वाले दिनों में सुधारों के कई कदम क्षेत्र में जान फूंकने की तैयारी में हैं। इसके लिए नियम– शर्तों को आसान बनाया जा सकता है या कुछ पाबंदियों को हटाया जा सकता है। इसके अलावा कृषि कमोडिटी की फ्यूचर ट्रेडिंग पर लगे प्रतिबंध को हटाया जा सकता है। गेहूं, गैर–बासमती चावल, दाल और तेल, बीज वगैरह पर लगे निर्यात प्रतिबंध से कृषि क्षेत्र पर बहुत बुरा असर पड़ा है। कारोबार को बढ़ावा देने के लिए पाबंदियों को हटाने का फैसला लिया गया है।

अधिकारिक आंकड़ों के मुताबिक मौजूदा सीजन में केंद्र सरकार 287.5 लाख टन चावल और 229.54 लाख टन गेहूं खरीद चुकी है। नतीजतन, भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई) की खरीद मूल्य में अच्छा–खासा इजाफा हो चुका है।

मल्टी कमाडिटी एक्सचेंज (एमसीएक्स) के सीईओ जोसेफ मैसी ने बताया कि सरकार चावल, तुअर और उड़द की फ्यूचर ट्रेडिंग की इजाजत दे सकती है। योजना आयोग की एक समिति ने अपनी रिपोर्ट में बताया था कि हाजिर भाव और मूल्य ट्रेडिंग के मूल्य में सीधा संबंध नहीं होता।' शुरुआत में कमोडिटी बाजार नियामक फारवर्ड मार्केट कमीशन (एफएमसी) ने गेहूं की फ्यूचर ट्रेडिंग को अनुमति दे दी थी। साल 2007 में सरकार ने गेहूं, चावल और दालों की फ्यूचर ट्रेडिंग पर रोक लगा दी थी। ऐसा दबाव में किया गया था। बाद में स्थिति नियंत्रण में आने और कीमतों में गिरावट शुरू होने के बाद केंद्र सरकार ने कई कमोडिटी के वायदा कारोबार को शुरू करने की अनुमति दे दी थी।

मानसून की शुरुआत के साथ 10 जून, 2009 को भारतीय मौसम विभाग ने संकेत दिए कि इस मौसम के दौरान बारिश अपने दीर्घावधि औसत (एलपीए) के मुकाबले 44.1 प्रतिशत तक कम हो सकती है। 15 दिन बाद, मानसून में देरी के कारण 54 प्रतिशत कमी आ गई। इस समय उद्योग पर नजर बनाए वालों की चिंता गहरा गई थी। मॉर्गन स्टैनली के अर्थशास्त्री चेतन आह्या का मानसून के बारे में कहना है, 'पिछले रुझान को देखते हुए ऐसा लगता है कि अगर वास्तविक बारिश में सामान्य से 7 प्रतिशत की कमी आती है, जैसा कि मौसम विभाग ने पूर्वानुमान लगया है, तो खरीफ खाद्यान्न के उत्पादन में साल–दर–साल के आधार पर गिरावट देखने को मिल सकती है।

डन एंड ब्रैडस्ट्रीट की अर्थशास्त्री याशिका सिंह का कहना है, 'निश्चित तौर पर मानसून में देरी की वजह से कुछ चिंताएं तो हैं, जैसा कि हम देख रहे हैं कि तिलहन की फसलों को कुछ नुकसान हो रहा है और अगर मानसून सचमुच में आता ही नहीं है तो कृषि उत्पादन मंद पड़ सकता है और ग्रामीण मांग और भोजन की कीमतों पर इसका बहुत बड़ा असर हो सकता है।'

विशेषज्ञों को चिंता इस बात की है कि यह कमी काफी बड़ी है, जिसे शायद बाद में भी पूरा नहीं किया जा सकेगा। एंजेल ब्रोकिंग के मुद्रा एवं जिंस विभाग के सहायक निदेशक नवीन माथुर का कहना है, 'निश्चित रूप में हम पीछे होते जा रहे हैं। कुछ क्षेत्रों में हल्की बूंदाबांदी ने हमारे पूर्वानुमानों में हल्के–बहुत सुधार जरूर किए हैं, लेकिन इससे बहुत ज्यादा कोई अंतर नहीं पड़ रहा और भारतीय मौसम विभाग के ताजातरीन आंकड़ों ने यह पहले ही साबित कर दिया है। इस साल इस दिशा में नुकसान हो सकता है और उसका असर फसलों पर भी देखा जा सकेगा।' इन सभी बातों का खाद्यान्न की उपलब्धता पर प्रतिकूल असर पड़ेगा। हालांकि प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने आश्वासन दिया है कि हमारे पास पर्याप्त स्टॉक है और मानसून की कमी के बावजूद हमारे यहां खाद्यान्न की कमी नहीं होगी।

(लेखक उद्योग व्यापार पत्रिका के उप संपादक हैं)
ई–मेल : dr.kaushik@rocketmail.com

खाद्य सुरक्षा की ओर बढ़ते कदम

प्रो.के.एम.मोदी

सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अधिक प्रभावी, भ्रष्टाचार मुक्त व पारदर्शी बनाकर 'खाद्य सुरक्षा' अधिक सुदढ़ की जा सकती है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सफल व प्रभावी क्रियान्वयन में भ्रष्टाचार सबसे बड़ा अवरोधक है जिसके उन्मूलन हेतु ठोस व प्रभावी कदम उठाए जाने नितांत जरूरी हैं। इसी भांति घटिया अनाज का विक्रय, राशन की दुकानें नहीं खुलना, खुले बाजार में उच्च कीमतों पर अनाज का विक्रय जैसी प्रवृत्तियां भी इस प्रणाली की सार्थकता को संदिग्ध कर रही हैं जिनको नियंत्रित किया जाना जरूरी है। खाद्य तक पहुंच बढ़ाने के लिए निर्धनता का उन्मूलन बेहद जरूरी है।

वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व के समक्ष खाद्य संकट ने विकराल व भीषण समस्या का रूप धारण कर लिया है। विश्व बैंक ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट संकेत दिया है कि गत तीन वर्षों में खाद्य पदार्थों की कीमतों में 83 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई जिसके कारण 'खाद्य सुरक्षा' पर खतरे के बादल मंडरा रहे हैं। इस विकट समस्या के समाधान हेतु विश्व के समस्त देश विविध प्रकार की नीतियों को क्रियान्वित करते हुए अपने देश के नागरिकों को 'खाद्य सुरक्षा' का कवच प्रदान करने हेतु सतत प्रयासरत हैं।

वर्तमान में हमारा देश भी खाद्य समस्या से जूझ रहा है। गौरतलब है कि देश में जनसंख्या व आय बढ़ने के साथ खाद्यान्नों की मांग तीव्र गति से बढ़ रही है। किंतु खाद्यान्नों के उत्पादन में आशानुकूल वृद्धि नहीं होने के कारण खाद्यान्नों की मांग व पूर्ति में अंतराल बढ़ता जा रहा है। इसी वजह से खाद्यान्नों की कीमतों में बढ़ोतरी हो रही है तथा जनसामान्य को समुचित मात्रा में उचित कीमतों पर खाद्यान्न उपलब्ध नहीं हो पा रहे हैं।

देश की समग्र जनसंख्या को 'खाद्य सुरक्षा' प्रदान करने के लिए खाद्य की भौतिक उपलब्धि आवश्यक है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए पर्याप्त खाद्य उपलब्धता हेतु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ही भारतीय नियोजकों ने खाद्यान्नों के संदर्भ में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लक्ष्य को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की ताकि विदेशों पर खाद्यान्न संबंधी निर्भरता को समाप्त किया जा सके तथा देशवासियों को 'खाद्य सुरक्षा' का कवच उपलब्ध करवाया जा सके।

निसंदेह रूप से, 'खाद्य सुरक्षा' के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ाना अत्यावश्यक है। इसी मूलमंत्र को दृष्टिगत रखते हुए देश में कृषि उत्पादन बढ़ाने व कृषि को विकास–पथ पर अग्रसर करने हेतु अनेक नए कार्यक्रमों व योजनाओं को मूर्त्त रूप प्रदान किया गया। "अधिक अन्न उपजाओ" आंदोलन का शुभारंभ वर्ष 1969 में तत्कालीन खाद्यान्न संकट से मुक्ति दिलवाने हेतु किया गया। इसी क्रम में, "भूमि सुधार कार्यक्रम' का सूत्रपात वर्ष 1960–61 में किया गया। इस कार्यक्रम के दौरान जमींदारी व जागीरदारी प्रथा के उन्मूलन, भू–जोतों की अधिकतम सीमा, काश्तकारों

की सुरक्षा व चकबंदी जैसे कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान की गई। 1960 के दशक की मध्यावधि के दौरान तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व में हरित क्रांति का श्रीगणेश किया गया। इस क्रांति की वजह से खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि दर्ज की गई तथा खाद्यान्नों के दृष्टिकोण से काफी हद तक देश आत्मनिर्भर बन गया और खाद्यान्न आयात कम हो गये। इसके साथ ही अनाज की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में भी बढ़ोतरी दर्ज की गई।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम

6 जुलाई, 09 को केन्द्रीय बजट 2009–10 पेश करते हुए वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी ने घोषणा की कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम पर काम शुरू हो चुका है । इस कानून के तहत ग्रामीण या शहरी क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले सभी परिवारों को 3 रुपये प्रति किलो के मूल्य पर 25 किलो चावल /गेहूं हर महीने उपलब्ध कराया जाएगा । सरकार खाद्य सुरक्षा अधिनियम की रूपरेखा शीघ्र ही सार्वजनिक बहस और सलाह–मशविरे के लिए खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग की वेबसाइट पर भी रखेगी ।

कृषि विपणन क्षेत्र में सुधार लाने हेतु सरकार के द्वारा कृषि विपणन के राष्ट्रीय संस्थान एवं राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ की स्थापना की गई। इसी भांति, कृषि उपजों के सुरक्षित भंडारण हेतु "राष्ट्रीय सहकारी विकास एवं भंडारण बोर्ड" तथा "केन्द्रीय भंडारण निगम" की स्थापना की गई।

नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002) में भी "खाद्य सुरक्षा" को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया कि देश का सबसे पहला प्रयास खाद्य सुरक्षा प्रणाली का निर्माण करना था ताकि अकाल का खतरा देश से एकदम समाप्त किया जा सके। "किसानों को अपनी फसल का उचित मूल्य प्राप्त हो सके" इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए सरकार द्वारा प्रमुख कृषि उपजों के न्यूनतम समर्थन मूल्यों की घोषणा की जाती है। कृषि लागत एवं मूल्य आयोग कृषिगत आगतों की लागतें व किसानों के लिए उचित प्रतिफल को सुनिश्चित करते हुए न्यूनतम समर्थन मूल्यों का निर्धारण करता है। इसी भांति, कृषकों को बिचौलियों के शोषण से छुटकारा दिलाने तथा उपज का समुचित मूल्य दिलाने के लिए "नियंत्रित मंडियों" की स्थापना भी की गई। वर्तमान में, लगभग 8000 मंडियां कृषकों को बिचौलियों के भंवरजाल से निकालने हेतु प्रयासरत हैं। प्राकृतिक आपदाओं यथा सूखा, बाढ़ व ओला वृष्टि से किसानों को संरक्षण प्रदान करने हेतु "फसल बीमा योजना" का शुभारंभ किया गया जिसे बाद में "व्यापक फसल योजना" तथा वर्तमान में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना" के रूप में क्रियान्वित किया जा रहा है। यही नहीं कृषिगत नियतों के निवास हेतु "कृषि निर्यात क्षेत्रों" को भी स्थापित किया गया है।

दुखद तथ्य है कि इन सभी योजनाओं व कार्यक्रमों को मूर्त रूप देने के पश्चात् भी वर्तमान वर्षों में कृषि की स्थिति चिन्ताजनक है, राष्ट्रीय आय में कृषि का अंश कम होता जा रहा है। वर्ष 2000–01 में राष्ट्रीय आय में कृषि का अंश 26 प्रतिशत था जोकि कम होकर 2006–07 में 18.5 ही रह गया। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए वर्ष 2008–09 में सरकार ने किसानों के हितों को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए 2.5 हजार करोड़ रुपये की राष्ट्रीय किसान विकास योजना को मूर्त रूप प्रदान किया। किसानों में आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति को नियंत्रित करने हेतु इस बजट में सरकार ने लगभग 4 करोड़ किसानों के कर्ज माफ करने हेतु 60 हजार करोड़ रुपये का प्रावधान किया ताकि कर्ज में डूबे किसानों को कुछ राहत मिल सके।

गौरतलब है कि खाद्यान्नों के दृष्टिकोण से आत्मनिर्भरता का अभिप्राय 'खाद्य सुरक्षा' नहीं है। 'खाद्य सुरक्षा' अधिक व्यापक, गतिमान व महत्त्वपूर्ण है।

"खाद्य सुरक्षा" खाद्यान्नों के समुचित व न्यायपूर्ण वितरण व्यवस्था के द्वारा भी संभव है। गौरतलब है कि विश्व विकास रिपोर्ट में खाद्य सुरक्षा को सभी व्यक्तियों के लिए सभी समय पर सक्रिय, स्वस्थ जीवन के लिए पर्याप्त भोजन की उपलब्धि के रू प में परिभाषित किया गया है। देश में उपभोक्ताओं को सस्ती कीमतों पर आवश्यक उपभोग की वस्तुएं उपलब्ध कराने हेतु सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अपनाया गया। इस प्रणाली के माध्यम से "उपभोक्ता को ऊंची कीमतों से सुरक्षा प्रदान करना" जैसे मूलभूत उद्देश्य को प्राप्त करने की चेष्टा की गई। इसके साथ ही यह तथ्य भी ध्यान में रखा गया कि जनसंख्या को न्यूनतम आवश्यक उपभोग स्तर प्राप्त हो सके। इस प्रणाली को संचालित करने हेतु सरकार वसूली कीमतों पर व्यापारियों व उत्पादकों से वस्तुएं खरीदती है जिनको उचित मूल्यों पर राशन की दुकानों के माध्यम से उपभोक्ताओं को उपलब्ध करवाती है। इस प्रणाली के तहत खाद्यान्नों के अतिरिक्त खाद्य तेल, चीनी, मिट्टी का तेल आदि का भी वितरण किया जाता है।

गरीब परिवारों को 'खाद्य सुरक्षा' प्रदान करने हेतु सरकार ने वर्ष 1997 में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली लागू की जिसके अन्तर्गत दोहरी कीमत प्रणाली संरचना को क्रियान्वित किया गया। इसके अन्तर्गत गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवारों को (बी पी एल) विशेष कार्ड जारी किये जाते हैं तथा उनसे निर्गमन कीमत आर्थिक लागत की 50 प्रतिशत ही वसूली जाती हैं। दूसरी तरफ, गरीबी रेखा से ऊपर रहने वालों के लिए कीमत अधिक रखी जाती है।

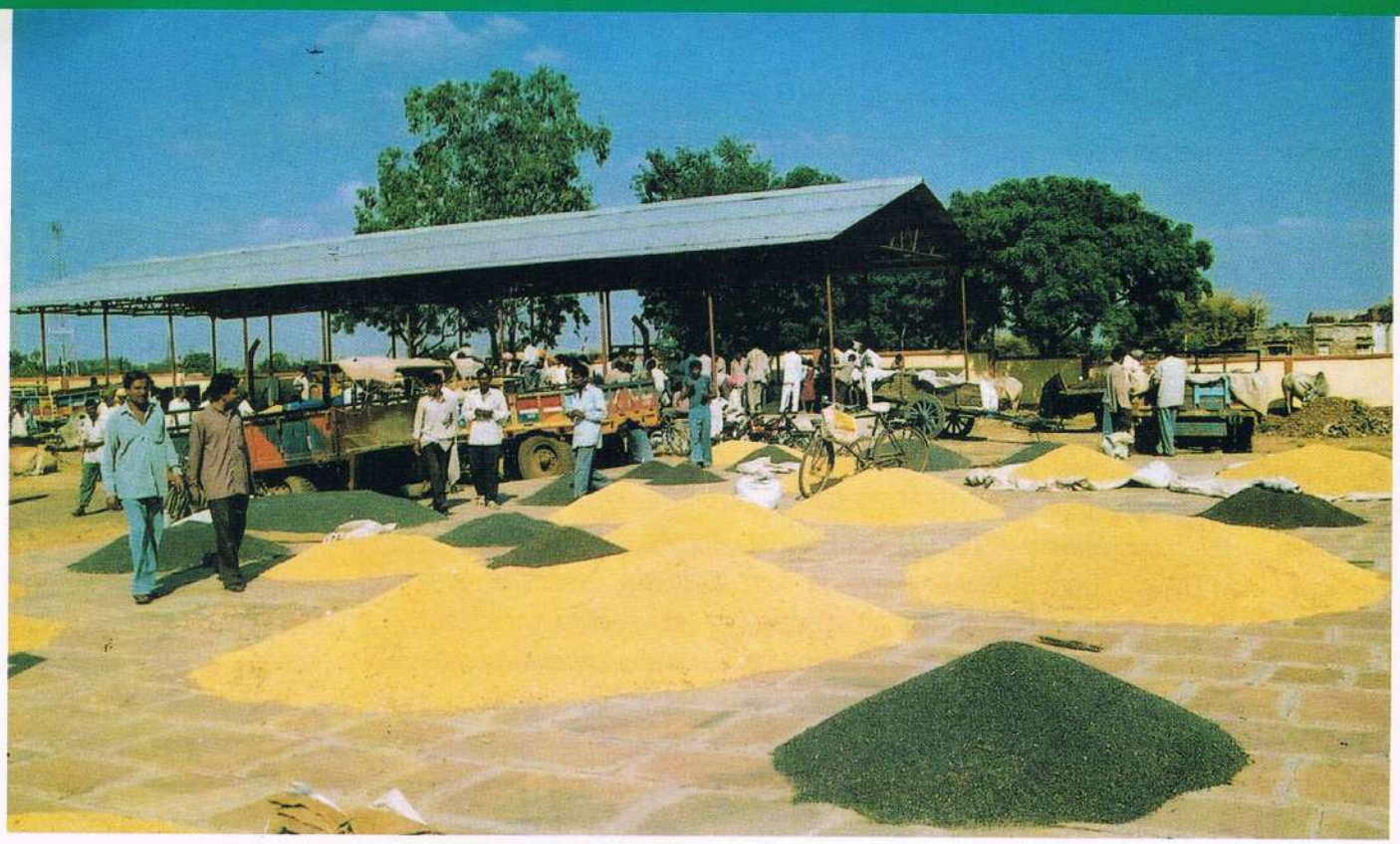

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली को गरीबों के लिए और अधिक उपयोगी बनाते हुए वर्ष 2000 में "अंत्योदय अन्न योजना" का श्रीगणेश किया गया। इस योजना के अंतर्गत देश के एक करोड़ निर्धनतम परिवारों को प्रति माह 35 किलोग्राम अनाज विशेष रियायती मूल्य पर उपलब्ध कराया जाता है ताकि इन निर्धनतम परिवारों को "खाद्य सुरक्षा" प्राप्त हो सके। इस योजना के अंतर्गत गेहूं व चावल का केंद्रीय निर्गम मूल्य क्रमशः 2 रुपये व 3 रुपये प्रति किलोग्राम रखा गया है। इस योजना को अधिक प्रभावी बनाते हुए सरकार ने 50 लाख अतिरिक्त परिवारों को इस योजना में शामिल किया है। इस योजना में विधवाओं, विकलांग व्यक्तियों, मरणासन्न व्यक्तियों तथा जनजातीय परिवारों को प्राथमिकता प्रदान की गई है। ज्ञातव्य है कि वर्ष 2004–05 में इस योजना के तहत 60.25 लाख टन अनाज आवंटित किया गया था जिसका लगभग 91 प्रतिशत उपयोग कर लिया गया।

देश में खाद्यान्नों के न्यायपूर्ण वितरण एवं इनके मूल्यों में स्थायित्व सुनिश्चित करने का दायित्व भारतीय खाद्य निगम के कंधों पर है जिसकी स्थापना वर्ष 1965 में की गई। तथा यह निगम खाद्यान्नों व अन्य खाद्य सामग्री के क्रय, भंडारण, संग्रहण, वितरण व बिक्री का प्रमुख कार्य संपादित कर रहा है। सरकार की ओर से खाद्यान्नों का "बफर स्टॉक" बनाना भी इस निगम का कार्य है। निगम ही सार्वजनिक वितरण प्रणाली हेतु दुकानों को खाद्यान्न उपलब्ध कराता है। इसी भांति, खाद्यान्नों के विदेशी व्यापार में भी इस निगम की भूमिका प्रमुख है। इसके अतिरिक्त, कृषि फसलों व तकनीकों के बारे में अनुसंधान को प्रोत्साहित करते हुए यह निगम "खाद्य समस्या" के समाधान हेतु कृत संकल्प है।

सरकार ने निर्धन व बेसहारा वरिष्ठ नागरिकों को 'खाद्य सुरक्षा' उपलब्ध कराने के लिए 1 अप्रैल, 2000 को "अन्नपूर्णा योजना" को शुरू किया। इस योजना के तहत वरिष्ठ नागरिकों को प्रतिमाह 10 किलोग्राम अनाज निशुल्क दिया जाता है। वर्तमान में, इस योजना से पेंशन प्राप्त करने वाले तथा वृद्धावस्था पेंशन प्राप्त नहीं करने वाले वरिष्ठ नागरिक लाभान्वित हो रहे हैं। इसी भांति, केंद्र सरकार ने वर्ष 2004 में "काम के बदले अनाज" योजना का शुभारंभ किया ताकि मजदूर वर्ग को खाद्य सुरक्षा प्रदान की जा सके। वर्तमान में यह कार्यक्रम "राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" में समन्वित किया जा चुका है।

देश में 'भुखमरी' की त्रासदी को दृष्टिगत रखते हुए केन्द्र सरकार ने वर्ष 2001 में ग्राम पंचायत स्तर पर "खाद्यान्न बैंकों" को स्थापित करने की घोषणा की ताकि देश को भुखमरी, अल्पपोषण व कुपोषण जैसी भयावह समस्याओं से विमुक्त किया जा सके। वर्ष 2002 में इस योजना को क्रियान्वित करते हुए देश में 1.14 लाख गांवों में 1100 करोड़ रुपये के खाद्यान्न बैंकों को स्थापित करने का निर्णय लिया गया। इन बैंकों के लिए सरकार ने 1000 करोड़ रुपये का 10 लाख टन गेहूं व चावल निशुल्क उपलब्ध कराने की व्यवस्था की। इस योजना का मूलभूत उद्देश्य यही है कि प्राकृतिक प्रकोप या तंगी के दौरान, गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवारों को निशुल्क खाद्यान उपलब्ध कराया जाए ताकि वे 'भुखमरी' के चंगुल में नहीं फंसे। गौरतलब है कि वर्ष 2005–06 में इन बैंकों की स्थापना के लिए 32.5 करोड़ रुपये की राशि आवंटित की गई।

जुलाई 2000 को "सर्वप्रिय" नामक राष्ट्रीय योजना का शुभारंभ किया गया ताकि देश की आम जनता को बुनियादी आवश्यकता की वस्तुएं सस्ती कीमतों पर उपलब्ध कराई जा सकें। इस योजना के तहत राशन की दुकानों पर खाद्यान्नों के अतिरिक्त 11 अन्य वस्तुएं उपलब्ध करवाने (यथा दाल, नमक, चाय, नहाने की साबुन, तेल व टूथपेस्ट) का प्रावधान है। इस योजना के क्रियान्वयन का भार राष्ट्रीय उपभोक्ता सहकारिता महासंघ पर है जो नोडल एजेंसी के रूप में कार्य करते हुए राज्य सरकारों को वस्तुएं उपलब्ध करवाता है तथा इन वस्तुओं के वितरण की व्यवस्था सार्वजनिक वितरण विभाग या अन्य एजेंसी के माध्यम से की जाती है।

सहकारी समितियों की भूमिका भी "खाद्य सुरक्षा" के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। ये समितियां निर्धन व्यक्तियों को कम कीमत पर आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध करवाते हुए 'खाद्य सुरक्षा' की दिशा में कदम बढ़ा रही हैं।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि तमिलनाडु में 94 प्रतिशत राशन की दुकानें सहकारी समितियों के द्वारा संचालित की जा रही हैं। गुजरात में 'अमूल' सहकारी समिति ने सम्पूर्ण देश में 'श्वेतक्रांति' का व्यापक प्रचार–प्रसार करके अपनी सफलता का परचम लहराया है। इसी भांति, दिल्ली में 'मदर डेयरी' उपभोक्ताओं को नियंत्रित कीमतों पर दूध व सब्जियां उपलब्ध कराते हुए 'खाद्य सुरक्षा' की दिशा में महत्त्वपूर्ण साबित हो रही हैं। एकेडमी ऑफ डेवलपमेंट साइंस (ए. डी. एस) महाराष्ट्र में 'अनाज बैकों' की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है ताकि 'खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम' को सफल व प्रभावी बनाया जा सके।

भारत सरकार ने देश में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए वर्ष 2007 में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन को स्वीकृति प्रदान की है। इस मिशन का उद्देश्य खाद्यान्नों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए खाद्यान्नों की पूर्ति में बढ़ोतरी करना है। खाद्यान्नों की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए इस मिशन में खाद्यान्नों के उत्पादन बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिये जाने का प्रावधान है।

कृषि मंत्रालय ने अनुमान लगाया है कि वर्ष 2012 तक देश में खाद्यान्नों की मांग में 2.50 करोड़ टन की वृद्धि होगी। इस मांग को पूरा करने हेतु आगामी चार वर्षों में गेहूं का उत्पादन 8 मिलियन टन, चावल का 10 मिलियन टन व दालों का उत्पादन 2 मिलियन टन बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सम्पूर्ण देश में गेहूं उत्पादन में वृद्धि हेतु 138 जिलों, चावल उत्पादन में वृद्धि के लिए 130 व दालों के लिए 150 जिलों की पहचान विशेष फोकस हेतु की गई। इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कृषि क्षेत्र में शिथिलता निवारण हेतु तथा कृषि में उत्पादकता संवृद्धि के लिए 25,000 करोड़ रुपये के विशेष पैकेज की घोषणा करके 'खाद्य सुरक्षा' के लिए विशेष पहल की है।

ज्ञातव्य है कि खाद्यान्नों की उपलब्धता होने के बावजूद भी क्रय–शक्ति के अभाव में निर्धन जनता 'खाद्य असुरक्षा' का शिकार होती है। देश की जनसंख्या का एक भाग गरीबी व न्यून आय के कारण अपनी खाद्यान्न संबंधी मूलभूत व जरूरी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असमर्थ है। इस असुरक्षा के शिकार लोग भूमिहीन श्रमिक, पारंपरिक दस्तकार, निराश्रित, मौसमी कार्यों में संलग्न मजदूर, पारम्परिक सेवाएं प्रदाता वर्ग, भिखारी आदि हैं। अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़े व दलित वर्ग के लोग तथा विशेष रूप से महिलाएं खाद्य असुरक्षा से प्रभावित हैं। देश में आर्थिक रूप से पिछड़े राज्यों, आदिवासी व सुदूर क्षेत्रों तथा प्राकृतिक संकटों से त्रस्त क्षेत्रों में 'खाद्य सुरक्षा' पर खतरा मंडरा रहा है। इस समस्या का समाधान करने हेतु सरकार गरीबी उन्मूलन व बेरोजगारी निवारण करने के लिए विविध योजनाओं को क्रियान्वित कर रही है। इस दृष्टिकोण से समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, रोजगार आश्वासन योजना, जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना आदि का योगदान उल्लेखनीय है। गौरतलब है कि विश्व में भारत प्रथम देश है जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सुनिश्चित करके गरीबी दूर करने के लिए रोजगार को कानूनी अधिकार की मान्यता प्रदान की है। इस योजना के माध्यम से ग्रामीण लोगों को रोजगार प्राप्त हो रहा है जिसके फलस्वरूप 'खाद्य सुरक्षा' के उद्देश्य को काफी हद तक प्राप्त किया जाना संभव है।

"कृषि के क्षेत्र में सफलता के लिए हमें आधुनिक उपायों का सहारा लेना होगा। सीमित मात्रा में उपलब्ध ज़मीन और जल संसाधनों का उपयोग हमें अधिक कुशलता से करना होगा। छोटे और सीमांत किसानों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए हमारे वैज्ञानिकों को नई तकनीकें खोजनी होंगी। हमें उन किसानों की ज़रूरतों पर विशेष ध्यान देना होगा, जिनके पास सिंचाई के साधन नहीं हैं। देश को एक और हरित क्रांति की ज़रूरत है और हम इस दिशा में भरपूर कोशिश करेंगे। हमारा मकसद है – कृषि में 4 फीसदी सालाना विकास, और मुझे विश्वास है कि अगले पांच सालों में हम इस लक्ष्य को हासिल कर सकेंगे।"

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह
15 अगस्त, 2009

सर्वविदित है कि स्वस्थ व संतुलित जीवन के लिए उपलब्ध खाद्य, मात्रात्मक व गुणात्मक, दोनों रूप में पर्याप्त होने चाहिए ताकि पोषण संबंधी आवश्यकताओं की परिपूर्ति हो सके। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए देश में वर्ष 1993 में "राष्ट्रीय पोषण नीति" अपनायी गई ताकि अधिकाधिक लोगों की पोषण संबंधी आवश्यकताएं पूर्ण की जा सकें। इस नीति की महत्वपूर्ण बातें हैं कि इसके अंतर्गत स्कूल पूर्व बच्चों में कुपोषण, अल्पपोषण का स्तर कम करना, विटामिन ए की कमी के कारण उत्पन्न अंधता को नियंत्रित करना, रक्त की कमी से ग्रसित गर्भवती महिलाओं की संख्या में 25 प्रतिशत कमी लाना तथा वृद्धावस्था पोषण पर विशेष ध्यान दिया जाए। इस नीति के तहत खाद्यान्न का वार्षिक उत्पादन 250 मिलियन टन तक का लक्ष्य रखा गया। दुखद तथ्य यह है कि इन सब रोजगार, गरीबी उन्मूलन व पोषण संबंधी कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के पश्चात् भी देश में भुखमरी, कुपोषण व अल्पपोषण की बढ़ती समस्या 'खाद्य सुरक्षा व्यवस्था पर सवालिया निशान लगा रही हैं। अभी भी पौष्टिक आहार युक्त भोजन की उपलब्धता गरीब वर्ग के लिए दिवा स्वप्न है। "ग्लोबल हंगर इंडेक्स" में भी 'खाद्य सुरक्षा' के दृष्टिकोण से देश की तस्वीर धुंधली है। इस इंडेक्स के अनुसार विश्व के 88 देशों में भारत का स्थान 66 वां है। एक सर्वेक्षण में यह चिन्ताजनक तथ्य प्रस्तुत किया गया है कि देश के 12 राज्यों में भुखमरी की स्थिति चिन्ताप्रद व शोचनीय है जिससे निपटने के लिए तत्काल प्रभावी कदम उठाये जाने की नितान्त आवश्यकता है। भुखमरी के साथ कुपोषण व अल्पपोषण की समस्याएं भी अपने पंजे फैलाती जा रही हैं। ऐसा अनुमान प्रस्तुत किया गया है कि देश के 60 प्रतिशत बच्चे कुपोषण के जाल में जकड़े हुए हैं। यही नहीं, हमारे देश में शिशु मृत्यु दर अन्य देशों की अपेक्षा काफी अधिक है जो कि 'खाद्य व्यवस्था' की असफलता को व्यक्त करती है।

देश में खाद्य संकट के लिए 'जलवायु परिवर्तन' भी जिम्मेदार है। आईपीसी की रिपोर्ट में भी यह संकेत दिया गया है कि तापमान वृद्धि के कारण वर्षा चक्र में अनियमितता आ गई है जिससे भारत में अनाज का उत्पादन घटने की संभावना है। इसके साथ ही, देश की बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्य संकट और अधिक बढ़ गया है।

हमें इस तथ्य पर भी विचार करना होगा कि कृषिगत आगतों यथा खाद, बीज, पानी व बिजली सभी के महंगा होने की वजह से कृषि "घाटे का सौदा" बन गई है। खेती पर मंडराते संकट के बादलों के कारण ही किसानों का पलायन गैर–कृषि धंधों की तरफ हो रहा है जोकि 'खाद्य सुरक्षा' के दृष्टिकोण से शुभ संकेत नहीं हैं। यही नहीं, जैव ईंधन की बढ़ती मांग व कीमतों को दृष्टिगत रखते हुए किसान जैव ईंधन फसलों को प्राथमिकता दे रहे हैं जिससे "खाद्यान्न उत्पादन" में बढ़ोतरी की संभावना कम होती जा रही है। इसके साथ ही, देश में मांस की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए पशुओं के लिए अनाज की व्यवस्था की जा रही है जिसके कारण गरीब वर्ग की थाली में रोटियों की संख्या कम होती जा रही है। बढ़ते खाद्य संकट की चेतावनी देते हुए वंदना शिवा ने भी कहा है कि "यदि ज्यादा से ज्यादा जमीन औद्योगिक बायोफ्यूल्स के काम में लगाई जाती रही तो महज़ दो साल के भीतर ही पूरी दुनिया को खाद्य आपदा झेलनी पड़ेगी।

देश के नागरिकों को 'खाद्य सुरक्षा' का कवच उपलब्ध करवाने हेतु यह आवश्यक है कि देश में खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने व गरीब वर्ग की क्रय शक्ति को बढ़ाने के लिए हरसंभव प्रभावी प्रयास किए जाएं। 'कृषि भारत की आत्मा है, इस तथ्य को ध्यान में रखकर कृषि के विकास, कृषिगत उत्पादकता में वृद्धि तथा कृषिक्षेत्र में 'गतिहीनता' की स्थिति को दूर करने के लिए अतिशीघ्र प्रभावी व्यूह रचना बनाकर उसके सफल क्रियान्वयन को सुनिश्चित किया जाए। जैव ईंधन की तरफ किसानों के बढ़ते झुकाव एवं गैर–कृषि कार्यों की ओर किसानों की बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने के उपाय करके तथा किसानों को अधिकाधिक अनाज उत्पादित करने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित करके ही देश में भुखमरी, अल्पपोषण व कुपोषण की त्रासदी को कुछ हद तक कम किया जाना संभव है। इसके साथ ही, किसानों को उन्नत बीज, खाद, पानी व ऋणों जैसी आवश्यक सुविधाओं को समय पर उपलब्ध करवाना भी आवश्यक है। कृषि में जोखिम अधिक है इसलिए किसानों को सुरक्षा कवच प्रदान करने के लिए फसल बीमा योजना को अधिक व्यापक व तार्किक बनाना जरूरी है। वैश्वीकरण के इस युग में कृषि को उद्योग का दर्जा देते हुए इसे व्यावसायिक बनाने की दिशा में सक्रिय प्रयास किये जाने जरूरी हैं। इसी भांति, गांवों में ही विभिन्न फलों व सब्जियों की प्रोसेसिंग इकाइयों की शृंखला स्थापित करके किसानों की आय व लाभों में वृद्धि करना संभव है। जैविक खेती, शुष्क खेती, जल संरक्षण, व कृषि शोध व विस्तार पर अधिक ध्यान देकर कृषि को लाभप्रद बनाना संभव है।

खाद्य तक पहुंच बढ़ाने के लिए निर्धनता का उन्मूलन परमावश्यक है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु गरीबी उन्मूलन व बेरोजगारी निवारण योजनाओं का प्रभावी व सफल क्रियान्वयन हर स्थिति में किया जाना अपेक्षित है। महिलाएं कुपोषण व अल्पपोषण से सर्वाधिक ग्रस्त पाई जाती हैं। अतः महिलाओं से संबंधित पोषण व न्यूनतम आहार योजनाओं को अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(लेखक चिड़ावा कॉलेज में व्यापार प्रशासन के विभागाध्यक्ष हैं)
ईमेल : modikm10@gmail.com

खाद्य सुरक्षा के समक्ष चुनौतियां

संजीव कुमार मलिक

कृषि विशेषज्ञों के अनुसार आने वाले दिनों में खाद्यान्न समस्या और गंभीर हो सकती है। भविष्य में खाद्यान्न सुरक्षा एवं पौष्टिकता के लिए कृषि विविधीकरण, जैविक खेती, बेहतर सिंचाई प्रबंधन तथा कुशल वित्तीय प्रबंधन के सिद्धांतों पर जोर देना होगा जिससे भुखमरी और कुपोषण जैसी गंभीर समस्याओं से मुक्ति मिल सके।

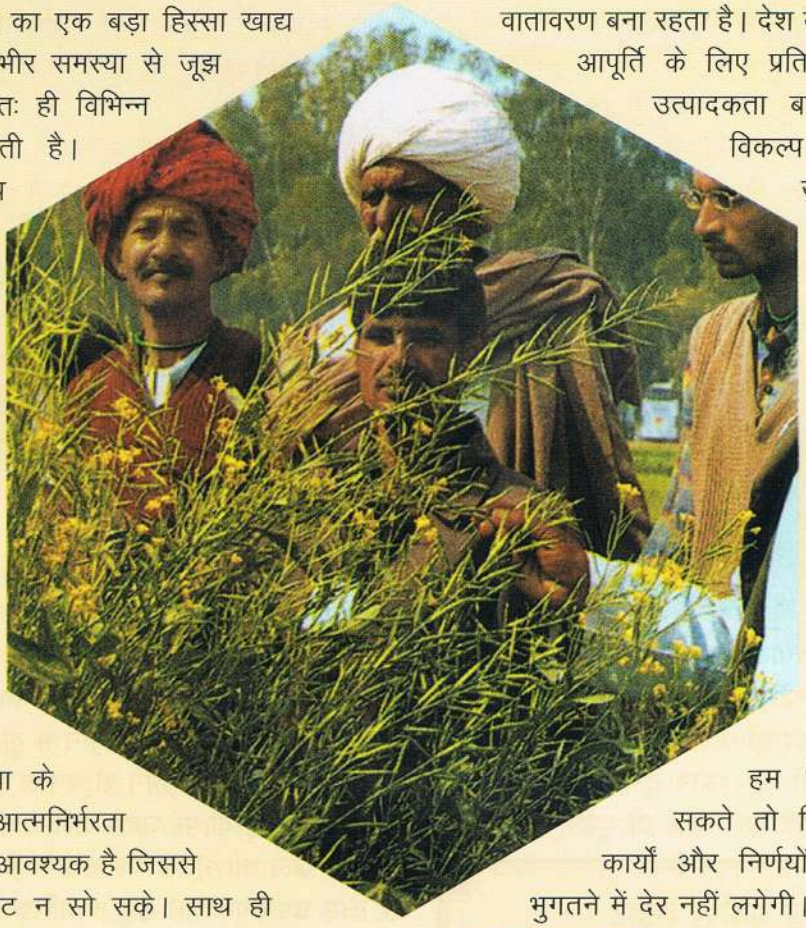

आज विश्व आबादी का एक बड़ा हिस्सा खाद्य असुरक्षा जैसी गंभीर समस्या से जूझ रहा है। यह समस्या स्वतः ही विभिन्न समस्याओं को जन्म देती है। भुखमरी के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, आयरन, विटामिन ए और आयोडीन की कमी से भी विश्व आबादी का बड़ा भाग ग्रसित हो रहा है। दूसरी तरफ कृषि की रीढ़ माने जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा, जल और वायु में लगातार गिरावट होती जा रही है। खाद्य सुरक्षा राष्ट्रीय सुरक्षा का अभिन्न अंग है। देश की तेजी से बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करना नितान्त आवश्यक है जिससे कोई भी भारतीय भूखे पेट न सो सके। साथ ही खाद्यान्न के क्षेत्र में भारत दुनिया का नेतृत्व कर सके। अतः भविष्य में खाद्यान्न आपूर्ति के लिए प्रभावी कार्य व्यापक तौर पर करने की आवश्यकता है।

वर्तमान परिवेश में बढ़ते शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और आधुनिकीकरण की वजह से कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल दिनोंदिन घटता जा रहा है। वर्ष 1951 में प्रति व्यक्ति भूमि 0.46 हेक्टेयर थी जो 1992–93 में घटकर 0.19 हेक्टेयर हो गयी, वह वर्ष 2001–02 तक घटकर 0.16 हेक्टेयर रह गयी है। स्वतंत्रता प्राप्ति के 60 वर्ष बाद भी केवल 40 प्रतिशत कृषि क्षेत्र सिंचाई के अधीन है तथा 60 प्रतिशत कृषि क्षेत्र की फसलें आज भी वर्षा पर निर्भर हैं। फलस्वरूप कृषि उत्पादन में जोखिम व अनिश्चितता का वातावरण बना रहता है। देश की बढ़ती आबादी की खाद्यान्न आपूर्ति के लिए प्रति इकाई क्षेत्र कृषि भूमि की उत्पादकता बढ़ाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं है। इस संबंध में खाद्यान्नों और तिलहनों की उत्पादकता बढ़ाने में नवीनतम तकनीक, जैव प्रौद्योगिकी और सूचना प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। विकास और समृद्धि के पैमाने को तय करते समय वर्तमान समाज के भविष्य की संभावनाओं और आवश्यकताओं पर भी विचार किया जाना चाहिए। यदि हम ऐसा नहीं कर सकते तो फिर अविवेकपूर्ण कार्यों और निर्णयों के दुष्परिणाम भुगतने में देर नहीं लगेगी। आज पूरा विश्व खाद्यान्न व खाद्य तेलों के गंभीरतम संकट की चपेट में है। एक तरफ जहां खेती में फसल उत्पादों की गुणवत्ता में कमी, मौसम की विषमताएं तथा उत्पादकता में कमी जैसी समस्याएं सामने आ रही हैं तो दूसरी तरफ खाद्यान्न समस्या, भुखमरी व कुपोषण देशों और महाद्वीपों के दायरे को तोड़कर विश्वव्यापी समस्या बन चुकी है।

आज खाद्य सुरक्षा के समक्ष विश्व जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर समस्या है। विश्व जलवायु परिवर्तन के कारण प्रकृति में बदलाव आ रहा है। जिसके परिणामस्वरूप फसल उत्पादन संबंधी,

मानव स्वास्थ्य संबंधी और मौसम की विषमताएं जैसी समस्याएं सामने आ रही हैं। विश्व जलवायु परिवर्तन के कारण मानव, पेड़–पौधों व जीव–जन्तुओं का विकास और वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होती है। साथ ही ग्लोबल वार्मिंग के कारण कहीं भारी वर्षा तो कहीं सूखा, कहीं लू तो कहीं ठण्ड, कही बर्फीले ग्लेशियर पिघल रहे हैं। इससे भारतीय प्रायद्वीप को खतरा बढ़ सकता है। जलवायु परिवर्तन से फसल चक्र भी अनियमित हो जाएगा। इससे कृषि उत्पादन और उत्पादकता भी प्रभावित होगी। अनेक अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय व क्षेत्रीय पर्यावरण संबंधी सम्मेलनों के बाद भी मानव का रूख इस संबंध में नकारात्मक संदेश देता है। जीवन की कैसी विडम्बना है कि जिस प्रकृति ने हमें शुद्ध जल, वायु, हरी–भरी धरती और शुद्ध पर्यावरण प्रदान किया, उसे हमने मुख्यतः विकसित राष्ट्रों ने अपने–अपने भौतिक सुख–साधनों की प्राप्ति के लिए अनेक कल–कारखाने लगाकर प्रदूषित कर दिया। जलवायु परिवर्तन के कारण किसानों के सामने अनावृष्टि, बाढ़ व सूखे जैसी प्राकृतिक आपदाओं से जूझने के साथ–साथ प्रतिकूल परिस्थितियों में अधिक उपज देने वाली फसलों को उगाने की भी चुनौती से निपटना होगा। इसके लिए किसानों को फसलोत्पादन में व्यापक बदलाव लाने, कृषि प्रणाली में लगातार परिवर्तन करने और विषम परिस्थितियों में अधिक पैदावार देने वाली प्रजातियों को उगाने पर मजबूर होना पड़ेगा।

आजकल खाद्य पदार्थों में विषैले कृषि रसायनों की उपस्थिति चिंता का विषय है। कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए खेती में जहरीले कृषि रसायनों का प्रयोग दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप खाद्य पदार्थों जैसे अनाज, दालों, तिलहनों, मसालों, चारा, सब्जियों, फलों, दूध और दुग्ध पदार्थों में कृषि रसायन अवशेषों की मात्रा बढ़ती जा रही है तो दूसरी तरफ मृदा, जल और वातावरण भी इन विषाक्त रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से दूषित होते जा रहे हैं जिसका अन्ततः मानव स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) और दूसरी एजेंसियां भी सुरक्षित और स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थों की कमी को लेकर चिंतित हैं। आज जहां विषाक्त खाद्य पदार्थों के कारण विभिन्न प्रकार की बीमारियां लोगों में पनप रही हैं वही कृषि रसायनों के गलत और अत्यधिक प्रयोग से कृषि भूमि का उपजाऊपन और मृदा स्वास्थ्य भी बिगड़ता जा रहा है। आए दिन खाद्य पदार्थों में कीटनाशकों, व्याधिनाशकों, रसायनिक उर्वरकों और पादप नियामकों के अवशेष मौजूद होने की रिपोर्ट सामने आती रहती है।

फसल उत्पादन के महत्वपूर्ण घटक पानी का अत्यधिक दोहन हो रहा है। सिंचित क्षेत्रों में सतही व भूमिगत जल के अनुचित व अत्यधिक दोहन के कारण जल स्तर निरन्तर नीचे गिरता जा रहा है जिसका भूमि के उपजाऊपन व फसलों की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। फसलों में अंधाधुंध सिंचाई व सिंचाई संख्या बढ़ाने से न केवल जल का अपव्यय होता है बल्कि मृदा स्वास्थ्य भी खराब होता है। वर्तमान परिवेश में सघन फसल प्रणाली व मशीनीकरण की वजह से भू–जल पर दबाव इतना बढ़ गया है कि भूमिगत जल स्तर दिनों–दिन नीचे गिरता जा रहा है। खेती में पारंपरिक सिंचाई प्रणाली उपयोग में लायी जा रही है, जिसमें खेतों में सिंचाई जल लबालब भर दिया जाता है। इससे काफी सारा पानी इधर–उधर बहकर या जमीन में रिसकर नष्ट हो जाता है जिसका अन्ततः उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। दूसरी तरफ ग्लोबल तापक्रम बढ़ने से वाष्पन व पौधों में वाष्पोत्सर्जन में वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप भूमि में नमी की कमी होने से फसल उत्पादन प्रभावित होता है। आज किसान पृथ्वी पर घटते जल स्तर से खासे परेशान हैं। गहरे भूमिगत जल को भूतल पर उठाने के लिए और इसका सिंचाई के लिए उपयोग करने हेतु अत्यधिक ऊर्जा और ईंधन की जरूरत पड़ती है।

देश में हरित क्रान्ति के बाद यह पहला अवसर है जब अनाज व दालों की उपलब्धता न्यूनतम स्तर पर पहुंच गई है। वर्ष 1991–95 के दौरान देश में खाद्यान्न की उपलब्धता औसतन 207 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष थी, जो 2004–07 में घटकर 186 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष रह गई थी। इसी प्रकार 1971–73 में दालों की उपलब्धता प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति 19 कि.ग्रा. थी, जो 2004–05 में घटकर मात्र 12 कि.ग्रा. रह गई है। इसी तरह वर्ष 1996–2000 में गेहूं, चावल, मक्का व बाजरा का वार्षिक उत्पादन प्रति व्यक्ति 191 कि.ग्रा. था, जो 2004–07 में घटकर 174 कि.ग्रा. रह गया। देश में पिछले

खाद्यान्नों का पर्याप्त भंडार

केन्द्रीय पूल में उपलब्ध खाद्यान्नों का वर्तमान भंडार लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत खाद्यान्नों की माँग को पूरा करने के लिए पर्याप्त है। केन्द्रीय पूल में खाद्यान्नों – गेहूं और चावल का स्टॉक एक जून 2009 को क्रमशः 331.22 लाख टन और 204.03 लाख टन था । दूसरी तरफ टीडीपीएस के तहत खाद्यान्नों की अनुमानित वार्षिक आवश्यकता करीब 446 लाख टन है और अन्य कल्याण योजनाओं के अंतर्गत करीब पचास लाख टन है ।

चार वर्षों में जहां खाद्यान्नों के उत्पादन में औसतन कोई 8 प्रतिशत की कमी हुई है, वही इसी समयावधि में देश की जनसंख्या में 8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इस अवधि में उन खेतों का क्षेत्रफल भी गिरता जा रहा है जहां इन फसलों को उगाया जाता है। उदाहरणार्थ अरहर के क्षेत्रफल में 1980–90 के दशक में 2.30 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई जो 2000–05 में घटकर शून्य से भी नीचे चली गई। जिसका मुख्य कारण पिछले तीन दशकों में गांवों की लगभग 20 लाख हेक्टेयर जमीन शहरों की चपेट में आना है। देश में जिस गति से जनसंख्या बढ़ रही है उस गति से खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाना चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है। इस कारण निकट भविष्य में भारत अनाजों का भी बड़े पैमाने पर आयात करते हुए दिखाई देगा। सन् 2007–08 में देश में 23 करोड़ टन अनाज का उत्पादन हुआ है और 2020 तक देश की जनसंख्या के लिए 36 करोड़ टन अनाज की आवश्यकता होगी जोकि एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। देश में खाद्यान्न उपलब्धता का यह परिदृश्य चिंताजनक तस्वीर प्रस्तुत कर रहा है। पूरी दुनिया में उत्पादित हो रहे खाद्यान्नों में सबसे चिंताजनक स्थिति गेहूं की है। जहां तक गेहूं के विश्व परिदृश्य का संबंध है, एक तरफ पिछले 6–7 वर्षों में गेहूं के भाव बढ़ते जा रहे हैं तो दूसरी तरफ पिछले 6–7 वर्षों में गेहूं का वैश्विक उत्पादन विश्व मांग से कम रहा है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया की 85 करोड़ से अधिक आबादी भुखमरी, बीमारी और कुपोषण से ग्रस्त है। दुनिया की इस विशाल जनसंख्या को पेटभर भोजन उपलब्ध नहीं है। यह हम सब के लिए शर्म की बात है कि जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा भूख से तड़प रहा है। जबकि यथार्थ यह है कि हम पहले से कही अधिक अनाज पैदा कर रहे हैं। साथ ही साथ कृषि क्षेत्र में नवीनतम तकनीकी एवं संचार व सूचना क्रांति से अनाज की उत्पादकता में और भी बढ़ोतरी की जा सकती है जिससे कोई भी व्यक्ति भूखे पेट न सो सके और करोड़ों लोग भुखमरी, कुपोषण और भूख–जनित बीमारियों से बच सकें। खाद्य एवं कृषि संगठन ने अपनी रिपोर्ट 'फूड आउट लुक' प्रस्तुत करते

"हमारे किसानों की खुशहाली के बिना भारत की खुशहाली मुमकिन नहीं है। यही वजह है कि हमारी सरकार ने लाखों किसानों के कर्ज माफ किये थे। हमने कृषि उत्पादों का खरीद मूल्य पहले से कही ज्यादा बढ़ाया है। इस साल मानसून में कुछ कमी हुई है। इसका कुछ विपरीत प्रभाव तो हमारी फसलों पर पड़ेगा, पर मुझे यकीन है कि हम इस परिस्थिति का सामना बखूबी कर पाएंगे। सूखे का मुकाबला करने के लिए हम अपने किसान भाइयों को हर प्रकार की मदद देंगे। मानसून में कमी को देखते हुए हमने किसानों द्वारा बैंक से लिए हुए कर्ज की अदायगी की तारीख को मुल्तवी कर दिया है। इसके अलावा, कम मियाद वाले कृषि ऋणों पर ब्याज की अदायगी के लिए हम किसानों को अतिरिक्त सहायता दे रहे हैं।"

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह

हुए कहा है कि पूरी दुनिया में उत्पादित हो रहे खाद्यान्नों में सबसे अधिक चिंताजनक स्थिति गेहूं की है। विश्व में गेहूं का उत्पादन पिछले दो वर्षों में करीब 6300 लाख टन से घटकर 6000 लाख टन रह गया है।

आज सरकार कृषि क्षेत्र पर सबसे ज्यादा ध्यान दे रही है। इस संबंध में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन की स्थापना एक महत्वपूर्ण कदम है। इससे देश में गेहूं, दलहन और तिलहनों की पैदावार में बढ़ोतरी होगी। हम प्रत्येक वर्ष 16 अक्तूबर को 'विश्व खाद्य दिवस' के रूप में मनाते हैं। गत 16 अक्तूबर, 2007 के दिन का प्रमुख नारा 'सबको भोजन का अधिकार' था। जब तेजी से बढ़ती विश्व जनसंख्या के लिए खाद्यान्न ही नहीं रहेगा तो फिर भोजन का अधिकार कैसे सुरक्षित रहेगा। भोजन के अभाव में करोड़ों लोग भुखमरी, कुपोषण और भूखजनित बीमारियों से ग्रस्त हो जाएंगे। अभी हाल में प्रधानमंत्री ने कृषि उत्पादों खासकर गेहूं, चावल, दाल और खाद्य तेलों का उत्पादन बढ़ाने पर जोर देते हुए कहा है कि जरूरी चीजों की कीमतों को काबू में रखने के लिए उनका उत्पादन बढ़ाना जरूरी है। कृषि को विकसित करने के लिए नवीनतम तकनीकों का प्रयोग करने की सख्त जरूरत है। दलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए नये किसानों और क्षेत्रों की पहचान करनी होगी। कृषि शोध पर जोर देने की बात भी होनी चाहिए। वर्ष 2015 तक कृषि उत्पादन मुख्यतः गेहूं के उत्पादन को 10 करोड़ टन तथा चावल उत्पादन को 16 करोड़ टन तक पहुंचाना होगा जिससे खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ लगातार बढ़ रही जनसंख्या का भरण–पोषण हो सके।

भारत में खाद्यान्न उत्पादन के समक्ष समस्याएं

- देश में बहुत से किसान कर्ज के बोझ तले दबे हुए हैं। यह दुख का विषय है कि खाद्यान्न के माध्यम से दूसरों को भोजन प्रदान करने वाला किसान स्वयं ऋणग्रस्तता तथा भारी ब्याज के बोझ के कारण आत्महत्या के दलदल में धंसता जा रहा है।
- किसानों को कृषि सब्सिडी से संबंधित वस्तुएं उचित मूल्य व समय पर नहीं मिल पाती हैं। अधिकांश किसानों को कृषि सब्सिडी का लाभ नहीं मिल पाता है।
- खाद्य प्रसंस्करण के तकनीकी ज्ञान और दक्षता की कमी। भारत दुनिया में फलों–सब्जियों का सबसे बड़ा उत्पादक है। लेकिन हम मात्र दो प्रतिशत प्रसंस्करण कर पाते हैं। दुनिया के प्रसंस्करण खाद्य बाजार में हमारी हिस्सेदारी मात्र एक से 1.5 प्रतिशत है। कारण यह है कि हमारे देश में फल–सब्जियों का औद्योगिकीकरण आज तक नहीं हुआ है। हमारे देश में हर वर्ष 50 हजार करोड़ रुपये की फल–सब्जियां नष्ट हो जाती हैं क्योंकि उपयुक्त सुविधाओं के अभाव में हम उन्हें सुरक्षित नहीं रख पाते हैं। इससे छोटे व सीमान्त किसान अधिक प्रभावित होते हैं।
- इसी तरह दूध का सर्वाधिक उत्पादन भारत में होता है परंतु प्रसंस्करण मात्र 15 प्रतिशत ही हो पाता है।
- औद्योगिक एवं विकसित देशों की करतूतों से वैश्विक तापमान बढ़ रहा है जिसका फसलोत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।
- मृदा के अनुचित और अत्यधिक दोहन के कारण मुख्य, गौण और सूक्ष्म पोषक तत्वों का स्तर दिनोंदिन गिर रहा है। दोहन के मुकाबले आपूर्ति के अभाव में पोषक तत्वों की जमीन में कमी होती जा रही है। आगामी दिनों में भयावह स्थिति का सामना करना पड़ सकता है। जमीन में सल्फर, जिंक व आयरन आदि सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती जा रही है।
- दोषपूर्ण सिंचाई प्रणाली व बढ़ते कृषि रसायनों के प्रयोग से भूमि के उपजाऊपन एवं फसल उत्पादों की गुणवत्ता में कमी, मौसम की विषमताएं और उत्पादकता में कमी जैसी समस्याएं सामने आ रही हैं ।
- पिछले तीन दशकों में गांवों की खेती योग्य लगभग 20 लाख हेक्टेयर जमीन औद्योगिकीकरण व शहरीकरण की चपेट में

आ गयी। जिसका सीधा प्रभाव खाद्यान्न उत्पादन पर पड़ रहा है।

- खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल कम हो जाने से राष्ट्रीय खाद्य संप्रभुता को आयातित खाद्य पदार्थों पर निर्भर करने से सामाजिक संकट उत्पन्न हो सकता है। खेती योग्य जमीन का क्षेत्रफल सीमित है। भविष्य में इसके बढ़ने की सम्भावना नगण्य है। विशेष आर्थिक क्षेत्र की स्थापना का खाद्यान्न आत्मनिर्भरता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए सुझाव

- किसानों को बीज, उर्वरक, मृदा संरक्षण, डीजल और बिजली बाजार भाव से सस्ती दर पर उपलब्ध कराकर सीधे सब्सिडी का लाभ दिया जाना चाहिए। इस प्रकार खाद्यान्न व तिलहनों के उत्पादन में बढ़ोतरी की जा सकती है। साथ ही किसानों को आसान किस्तों पर कर्ज उपलब्ध कराना होगा।
- किसानों को उनकी फसलों का उचित मूल्य मिलना चाहिए ताकि वे अधिक खाद्यान्न उत्पादित करें और देश को खाद्यान्नों का आयात न करना पड़े।
- जैव प्रौद्योगिकी क्षेत्र को भी चावल, गेहूं, दलहन व तिलहन की उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रभावशाली उपाय ढूंढने होंगे।
- भोजन की समस्या के समाधान हेतु हमें खाद्य प्रसंस्करण पर भी जोर देना होगा।
- कीटनाशकों का प्रयोग कम करने के लिए ऐसे जींस वाले पौधे विकसित किए जाएं जिनसे कीड़ों को एलर्जी हो।
- शुष्क व अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में फव्वारे सिंचाई विधि का प्रयोग किया जाए। कम पानी वाले क्षेत्रों में ड्रिप सिंचाई प्रणाली अपनाई जाए। इससे पानी के अनावश्यक अपव्यय पर रोक लगेगी।
- फसल उत्पादन से संबंधित किसी भी समस्या के समाधान के लिए 'किसान कॉल सेंटर की सुविधा सभी राज्यों में होनी चाहिए। इस सेवा के तहत किसान अपनी समस्या दर्ज करा सकते हैं जिनका समाधान 24 घंटे के अंदर कृषि विशेषज्ञों द्वारा उपलब्ध करा दिया जाएगा।
- सिंचित और असिंचित दोनों क्षेत्रों के किसानों को फसल बीमा योजना का लाभ मिलना चाहिए जिससे किसान जोखिम की अवस्था में आत्महत्या करने से बच सकें।
- फसलों के आनुवांशिक रूप से सुधार के बारे में बौद्धिक स्तर पर ध्यान देना होगा। ऐसे पौधे विकसित किए जाएं जिसमें रेगिस्तानी पौधों के जींस हों और वह कम से कम पानी पर अपना जीवन चक्र पूरा कर सकें।
- किसानों को सघन फसल प्रणाली के अंतर्गत भूमि का नियमित रूप से परीक्षण कराते रहना चाहिए। मृदा में जिन सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पाई जाए, उनकी आपूर्ति रसायनिक उर्वरकों, वर्मी कम्पोस्ट, गोबर की खाद, जैविक उर्वरकों आदि को देकर कर सकते हैं।
- औद्योगिक इकाइयां लगाने के लिए बेकार व परती पड़ी भूमि का उपयोग किया जाना चाहिए। केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (2008) के अनुसार भार में 18 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्य बेकार भूमि है तथा 25 मिलियन हेक्टेयर परती भूमि है। इन दोनों को मिलाकर कुल 43 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल बनता है। औद्योगिकीकरण के लिए देश में पर्याप्त बेकार व परती भूमि है।
- उपजाऊ भूमि की रक्षा व बचाव के लिए पर्याप्त कानूनी उपाय किये जाने चाहिए जिससे देश में खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता सुनिश्चित की जा सके। वन संरक्षण कानून की तर्ज पर कृषि भूमि संरक्षण कानून बनाया जाना चाहिए। जिससे देश के किसी भी क्षेत्र से उपजाऊ भूमि का अधिग्रहण न किया जा सके और उपजाऊ भूमि केवल कृषि उद्देश्यों के लिए संरक्षित की जा सके।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेल : s.k.malik@yahoo.com.in

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

भारत में खाद्य सुरक्षा एक अवलोकन

डॉ. राजेश कुमार सिंह

खाद्य सुरक्षा की संकल्पना में विगत वर्षों में काफी परिवर्तन आया है। सन् 1970 के दशक तक केवल खाद्य उपलब्धता तथा स्थिरता खाद्य सुरक्षा के अच्छे मापक माने जाते थे। खाद्य उपलब्धता में आत्मनिर्भर होने पर उसे विकासशील देशों में खाद्य नीति में उच्च प्राथमिकता देते थे। यद्यपि कुछ देश इस नीति के तहत खाद्य उपलब्धता में आत्मनिर्भर हो गए तथा साथ ही खाद्यान्नों का उत्पादन भी बढ़ाया। लेकिन वे दीर्घकालीन समय से चली आ रही घरेलू खाद्य सुरक्षा की समस्या का समाधान नहीं कर पाए।

खाद्य सुरक्षा की समस्या के समाधान हेतु इसकी पारंपरिक प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई। जिसके तहत खाद्य सुरक्षा के मूल्यांकन में खाद्य उपलब्धता के स्थान पर 'खाद्य ऊर्जा अन्तर्ग्रहण' को प्राथमिकता दी गई। इस आधार पर यह मापन आसान हो गया कि पोषक स्तर से नीचे कितने परिवार हैं, जिन्हें आवश्यक मात्रा में पर्याप्त कैलोरी ऊर्जा नहीं मिल रही है। पोषणकर्ताओं का विचार है कि पोषक स्तर मापने में ऊर्जा अन्तर्ग्रहण एक कमजोर मापक है, जो न केवल पोषक अन्तर्ग्रहण पर निर्भर है वरन् अपोषित खाद्य सामग्री पर भी निर्भर है जो निजी एवं सार्वजनिक रूप से उपलब्ध होती है। अखाद्य कारकों को जो जैविक अवशोषण से प्रभावित होते हैं, खाद्य सुरक्षा में सम्मिलित करते हैं। इसलिए कुपोषण के मूल्यांकन में निवेशित मापकों को ही आधार नहीं बनाना चाहिए। वरन् इसके परिणामों को भी मद्देनजर रखना चाहिए। इसके आधार स्वरूप सुझाए गए परिणामों

राष्ट्रीय स्तर पर हमने खाद्य सुरक्षा की समस्या का पारम्परिक आधार पर समाधान किया है, जिनमें खाद्यान्नों की उपलब्धता में स्थायित्व एवं आत्मनिर्भरता प्राप्त की है, जो खाद्यान्नों के वर्तमान स्टॉक से स्पष्ट होता है। फिर भी वर्तमान में भारत में लाखों लोग खाद्य असुरक्षा एवं कुपोषण से ग्रसित हैं। हमारे देश के सामने इस दृष्टि से उन्हें पर्याप्त पोषण एवं नियमित खाद्य आपूर्ति व स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करना आदि महत्वपूर्ण मुद्दे हैं। इसके लिए प्रति व्यक्ति खाद्य का उपयोग प्रति व्यक्ति खाद्य ऊर्जा अन्तर्ग्रहण तथा कुपोषण आदि को मानवमितिक मापकों के आधार पर मापकर इस समस्या के समाधान खोजे जाने चाहिए।

में मानवमितिक मापक, कुपोषण के चिकित्सकीय लक्षण, जैव–रसायनिक सूचक तथा भौतिक गतिविधियों को सम्मिलित किया गया है। इनमें मानवमितिक मापकों को स्वीकार किया गया है। इसमें सामान्यतया समयानुसार शारीरिक मापन देखा जाता है, जिनमें कुपोषण के अत्यन्तता की सीमा आने पर जैव रासायनिक तथा चिकित्सकीय मानकों का सहारा लिया जाता है। परिणाम सूचक स्वास्थ्य एवं कार्यात्मक क्षमता से काफी निकटता से संबंधित होते हैं।

नीति निर्माण में खाद्य सुरक्षा से अत्यन्त ग्रसित परिवारों तथा सीमान्त या समन्वित परिवारों के मध्य अन्तर करना आवश्यक होता है। सीमान्त परिवार सूखा, मौसमी भिन्नता तथा मुद्रास्फीति के वर्षों के दौरान अनियमित रूप से ग्रसित होते हैं अर्थात् इन परिस्थितियों में इनको प्राप्त होने वाली कैलोरी पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पाती है। समन्वित खाद्य सुरक्षा में खाद्य उपलब्धता अथवा खाद्य अतिरेक से संबंधित जोखिम बना रहता है। इस प्रकार नीतियां मूल्य निर्धारण, साख, फसल बीमा तथा अस्थाई रोजगार के अवसर उत्पन्न करके स्थिति में सुधार करती हैं। स्पष्ट है कि खाद्य सुरक्षा की दीर्घकालिक समस्या मूलतः गरीबी से संबंधित होती है, तथा भोजन सामग्री की निरंतर अपर्याप्तता के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। जिस आधार पर खाद्य सुरक्षा का सर्वाधिक प्रभाव गरीबों पर पड़ता है। गैर–भूमि परिसम्पत्तियों का बन्दोबस्त करके उनकी क्रय–शक्ति को बढ़ाने, रोजगार के अवसर उत्पन्न करना, कृषि उत्पादन कार्यक्रमों, आधारभूत ढांचे तथा मानव विकास आदि के जरिए इसे कम किया जा सकता है जो प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से खाद्य सुरक्षा से सम्बद्ध हैं।

भारत भी विश्व के अन्य देशों की तरह खाद्य सुरक्षा के प्रति जागरूक है, तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त निरंतर विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा इस दिशा में प्रगति की है। भारत विगत दशकों से खाद्यान्नों में आत्मनिर्भर होता आ रहा है। विगत तीन दशकों में गरीबी में काफी कमी आयी है। सन् 1973–74 में 55 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे थे, जो घटकर 1993–94 में 36 प्रतिशत तथा 2000 में 26.16 प्रतिशत हो गई है।

दीर्घकालिक खाद्य असुरक्षा में जनसंख्या का एक बड़ा भाग अभी भी गरीबी रेखा से नीचे है, तथा उसे पर्याप्त मात्रा में स्वच्छ पेयजल तथा प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधा नहीं मिलती है।

राष्ट्रीय स्तर पर हमने खाद्य सुरक्षा की समस्या का पारम्परिक आधार पर समाधान किया है, जिनमें खाद्यान्नों की उपलब्धता में स्थायित्व एवं आत्मनिर्भरता प्राप्त की है, जो खाद्यान्नों के वर्तमान स्टॉक से स्पष्ट होता है। फिर भी वर्तमान में भारत में लाखों लोग खाद्य असुरक्षा एवं कुपोषण से ग्रसित हैं। हमारे देश के सामने इस दृष्टि से उन्हें पर्याप्त पोषण एवं नियमित खाद्य आपूर्ति व स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करना आदि महत्वपूर्ण मुद्दे हैं। इसके लिए प्रति व्यक्ति खाद्य का उपयोग, प्रति व्यक्ति खाद्य ऊर्जा अन्तर्ग्रहण तथा कुपोषण आदि को मानवमितिक मापकों के आधार पर माप कर इस समस्या के समाधान खोजे जाने चाहिए।

भारत में उत्पादन की प्रवृत्ति तीव्रता से विकसित रूप में परिलक्षित हुई है। सन् 1962–63 से 1971–73 के दौरान खाद्य उत्पादन प्रतिवर्ष 2.11 प्रतिशत तथा कुल कृषि उत्पादन 2.03 प्रतिशत था जो बढ़कर 1991–93 से 1997–99 में क्रमशः 2.72 प्रतिशत तथा 2.65 प्रतिशत हो गया है। लेकिन बढ़ती जनसंख्या के संदर्भ में इसमें मात्रात्मक वृद्धि के साथ गुणात्मक सुधार भी लाने होंगे। 'राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण' के अनुसार भारत में 1970–71 से 1997–98 के दौरान प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों का उपयोग प्रतिवर्ष कम हुआ है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति 0.70 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 0.20 प्रतिशत दर से हुआ है। भारत में प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों का उपयोग 1970–71 में ग्रामीण क्षेत्रों में 15.35 किग्रा/माह था जो 1997–98 में घटकर 12.50 किग्रा/व्यक्ति प्रतिमाह हो गया है। शहरी क्षेत्रों में इन्हीं वर्षों में 11.36 किग्रा से 10.40 किग्रा घटा है, जो ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में कम है।

"हमारे पास अनाज के पर्याप्त भंडार हैं । अनाजों, दालों और रोज़मर्रा की दूसरी ज़रूरी चीज़ों की बढ़ती हुई कीमतों पर काबू पाने के लिए हर मुमकिन कोशिश की जाएगी । मैं सभी राज्य सरकारों से अपील करूंगा कि वे आवश्यक वस्तुओं की जमाखोरी और कालाबाजारी रोकने के लिए अपने कानूनी अधिकारों का प्रयोग करें ।"

प्रधामंत्री डॉ. मनमोहन सिंह

जनसंख्या एवं आय में वृद्धि, नगरीकरण में वृद्धि तथा इससे सापेक्षित रूप से संबंधित खर्च के वितरण में असमानता से खाद्य मांग बढ़ी है। भारत के आर्थिक एवं सामाजिक अध्ययन केन्द्र ने प्रक्षेपित आंकड़े प्रस्तुत किये हैं। जिनके अनुसार सन् 2011 तक भारत की जनसंख्या 1197 मिलियन

ग्रामीण भारत में खाद्य सुरक्षा की स्थिति पर रिपोर्ट

20 फरवरी, 2009 को जारी सुविख्यात कृषि वैज्ञानिक प्रोफेसर एम.एस. स्वामीनाथन की रिपोर्ट 'ग्रामीण भारत में खाद्य असुरक्षा की स्थिति' में देश के विभिन्न राज्यों में खाद्य असुरक्षा के स्तर का विस्तार से वर्णन किया गया है । साथ ही इसमें पोषण सुरक्षा के कार्यक्रमों के कियान्वयन के स्तर का भी जायजा लिया गया है । रिपोर्ट में कहा गया है कि देश में कुपोषण के शिकार लोगों की संख्या बढ़ रही है । सन् 1990 के बाद लोगों के कुपोषण के स्तर में जो सुधार आया था, अब उसमें फिर गिरावट आ रही है । खाद्य उत्पादन में वृद्धि में कमी, बढ़ती बेरोजगारी और देश में गरीबों की क्रयशक्ति में कमी से ग्रामीण अर्थव्यवस्था कमजोर हो रही है ।

प्रोफेसर एम.एस. स्वामीनाथन ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि खाद्य सुरक्षा के तीन तत्व होते हैं । पहला, खाद्य उपलब्धता जोकि खाद्य उत्पादन और आयात पर निर्भर करता है । दूसरा, खाद्य उपलब्धता जोकि लोगों की क्रयशक्ति पर निर्भर करती है । तीसरा, खाद्य अवशोषण जिससे तात्पर्य सुरक्षित पेयजल, पर्यावरणीय स्वास्थ्य विज्ञान, प्राइमरी स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा है ।

रिपोर्ट में भुखमरी और कुपोषण को कम करने के राष्ट्रीय तथा मिलेनियम डेवलपमेंट लक्ष्य को हासिल करने के लिए कार्यक्षेत्र के प्राथमिक क्षेत्रों के बारे में सुझाव दिए गए हैं । खाद्य वितरण से संबद्ध कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रमों – सार्वजनिक वितरण प्रणाली, समेकित बाल विकास योजना और मिड डे भोजन योजना आदि की प्रभावशीलता जांचते हुए उनमें सुधार हेतु निम्नलिखित सुझाव दिए गए हैं –

- सार्वभौमिक सार्वजनिक वितरण प्रणाली एक समान मूल्यों पर आधारित हो और जोकि गरीबों को उपलब्ध हो सके ।
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली में भोजन का आवंटन घर में उपभोक्ता इकाईयों की संख्या पर निर्भर हो ।
- सामाजिक सुरक्षा नेट और कृषि उत्पादन कार्यक्रम ।

अध्ययन रिपोर्ट में जलवायु और वैश्विक खाद्य मूल्य में बढ़ोतरी के बड़े संकटों पर भी प्रमुखता से चर्चा की गई है । रिपोर्ट में सात संकेतकों का इस्तेमाल किया गया है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से खाद्य सुरक्षा और एक व्यक्ति में पोषण के स्तर को प्रभावित करते हैं। यह संकेतक ली जाने वाली कैलोरी की मात्रा, सुरक्षित पेयजल तथा शौचालयों तक पहुंच, एनीमिया की शिकार महिलाओं और बच्चों पर आधारित हैं ।

हो जाएगी, तथा नगरीकरण की दर, ग्रामीण नगरीय अनुपात ऐतिहासिक प्रवृति से बढ़ेंगे तथा आज वितरण व मूल्यों में वृद्धि 1988 की दर के अनुसार होगी। जिसके आधार पर अनुमान लगाया गया है कि दुग्ध उत्पादों, फल–सब्जियों तथा चीनी में 4 से 5 प्रतिशत तथा खाद्य तेलों व दालों में 20 से 2.20 प्रतिशत व खाद्यान्नों में 2.20 प्रतिशत मांग बढ़ेगी। वर्तमान में 143 किग्रा अनाज प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष उपलब्ध होता है। इस दर पर सन् 2020 तक कुल 192 मिलियन टन खाद्यान्नों का उपयोग होगा। आय में वृद्धि से मांग अधिक हो सकती है। यदि कुल खर्च में 5 प्रतिशत वृद्धि होती है तथा कुल जनसंख्या 1343 मिलियन हो जाती है तो 2020 तक कुल 221 मिलियन टन खाद्यान्नों की मांग होगी।

वर्षापोषित पारिस्थितिकी तंत्र में किसानों की क्रयशक्ति में होने वाली धीमी वृद्धि खाद्य सुरक्षा के लिए एक चुनौती है। ये किसान सिंचित क्षेत्रों में खाद्य उत्पादन बढ़ाने का पर्याप्त लाभ नहीं ले पाते हैं। इनकी सहायता के लिए नवीन शुष्क भूमि विकास किया जा रहा है। जल संरक्षण तकनीकी, नमी संरक्षण, अर्न्तफसली व्यवस्था तथा सूखा प्रतिरोधी फसलों को अपनाकर शुष्क क्षेत्रों में भी उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। जल, विद्युत तथा उर्वरक की उचित कीमत को नियंत्रित करके ग्रामीण आधारभूत संरचना में सुधार, सिंचाई विकास तथा मृदा अपरदन को रोकने के लिए निवेश किया जाना चाहिए, ताकि खाद्य उत्पादन अपेक्षित मात्रा में हो सके, जिससे खाद्य सुरक्षा में सहायता मिलेगी।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल : dr.rajeshkumars@ymail.com

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन

किसानों की आशा की नई किरण

संगीता यादव

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन किसानों के लिए रामबाण साबित हो रहा है। इस योजना का मुख्य लक्ष्य सुस्थिर आधार पर गेहूं, चावल व दलहन की उत्पादकता में वृद्धि लाने का है, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के लिए 11वीं पंचवर्षीय योजना अवधि 2007-08 से 2011-12 तक के लिए निर्धारित की गई है। इसके लिए 4882.48 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन अलग-अलग चरणों में लागू किया गया है। चावल, गेहूं एवं दहलन के लिए अलग-अलग राज्यों का चयन किया गया है। इस योजना के तहत किसानों को बैंक से ऋण भी दिया जा रहा है। ऐसी स्थिति में किसानों को दी जाने वाली सब्सिडी की राशि बैंकों को जारी की गई है।

केंद्र सरकार की ओर से अगस्त 2007 में शुरू किया गया राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन किसानों के लिए रामबाण साबित हो रहा है। इस योजना के जरिए किसान अधिक से अधिक लाभ पा रहे हैं। एक तरफ किसान जहां सरकार के सहयोग से अपनी उपज की सुरक्षा कर रहे हैं वहीं विभिन्न प्रमाणित बीजों की बुवाई करने से उपज का प्रतिशत भी बढ़ा है। इस योजना का मुख्य लक्ष्य सुस्थिर आधार पर गेहूं, चावल व दलहन की उत्पादकता में वृद्धि लाने का है, जिससे देश में खाद्य सुरक्षा की स्थिति को सुनिश्चित किया जा सके। इसका दृष्टिकोण समुन्नत प्रौद्योगिकी के प्रसार एवं कृषि प्रबंधन पहल के माध्यम से इन फसलों के उत्पादन में व्याप्त अंतर को दूर करना है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के लिए 11वीं पंचवर्षीय योजना अवधि 2007–08 से 2011–12 तक के लिए शुरू की गई है। इसके लिए 4882.48 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन अलग–अलग चरणों में लागू किया गया है। चावल, गेहूं एवं दहलन के लिए अलग–अलग राज्यों का चयन किया गया है। चावल के लिए देश के 12 राज्यों के 133 जिले शामिल हैं। ये राज्य हैं– आंध्र प्रदेश (11 जिले), असम (13 जिले), बिहार (18 जिले), छत्तीसगढ़ (10 जिले), झारखंड (11 जिले), कर्नाटक

(7 जिले), मध्य प्रदेश (9 जिले), उड़ीसा (15 जिले), तमिलनाडु (5 जिले), उत्तर प्रदेश (26 जिले), पश्चिम बंगाल (8 जिले)।

गेहूं के लिए 9 राज्यों के 138 जिले चयनित किए गए हैं। ये हैं– पंजाब (7 जिले), हरियाणा (7 जिले), उत्तर प्रदेश (38 जिले), बिहार (25 जिले), राजस्थान (15 जिले), मध्य प्रदेश (30 जिले), गुजरात (4 जिले), महाराष्ट्र (8 जिले), पश्चिम बंगाल (4 जिले)।

दलहन के लिए 14 राज्यों के 168 जिले शामिल किए गए हैं। ये हैं– आंध्र प्रदेश (19 जिले), बिहार (13 जिले), छत्तीसगढ़ (8 जिले), गुजरात (11 जिले), कर्नाटक (13 जिले), मध्य प्रदेश (20 जिले), महाराष्ट्र (18 जिले), उड़ीसा (10 जिले), राजस्थान (15 जिले), तमिलनाडु (12 जिले), पंजाब (5 जिले), हरियाणा (5 जिले), उत्तर प्रदेश (19 जिले), पश्चिम बंगाल (5 जिले)।

इस योजना के अंतर्गत इन जिलों के 20 मिलियन हेक्टेयर धान के क्षेत्र, 13 मिलियन हेक्टेयर गेहूं के क्षेत्र व 4.5 मिलियन हेक्टेयर दलहन के क्षेत्र शामिल किये गये हैं जो धान व गेहूं के कुल बुआई क्षेत्र का 50 प्रतिशत है। दलहन के लिए अतिरिक्त 20 प्रतिशत क्षेत्र का सृजन किया जा रहा है।

किसानों को लाभ ही लाभ

इसका लाभ उठाने के लिए किसान जमीन पर शुरू की गई गतिविधियों पर आने वाली कुल लागत का 50 प्रतिशत भाग वहन करेंगे अर्थात् उन्हें आधा हिस्सा देना होगा। इस योजना के तहत किसानों को बैंक से ऋण भी दिया जा रहा है। ऐसी स्थिति में किसानों को दी जाने वाली सब्सिडी की राशि बैंकों को जारी की गई है। इसके लिए किसान को सिर्फ अपने जिले के कृषि विभाग के कार्यालय में संपर्क करना होता है। जहां मिशन से जुड़े कर्मी फार्म भरवाने के साथ ही सुविधा संबंधी अन्य सभी कार्यवाहीं पूरी करवाते हैं। इस योजना के क्रियान्वयन के परिणाम स्वरूप वर्ष 2011–12 तक चावल के उत्पादन में 10 मिलियन टन, गेहूं के उत्पादन में 8 मिलियन

टन व दलहन के उत्पादन में 2 मिलियन टन की वृद्धि हुई है।

एनएफएसएम ने किया जागरूक

एनएफएसएम की सहायता से जहां गेहूं, चावल एवं दालों की उत्पादकता में वृद्धि हुई है वहीं किसानों की समृद्धि भी बढ़ी है। इस योजना के जरिए इस क्षेत्र के किसानों में खासतौर से दलहन उत्पादन के प्रति ललक बढ़ी, जो अभी तक इससे कट रहे थे। साथ ही किसानों को समय–समय पर मिलने वाले सुझाव से भी फसल बर्बाद होने से बची। किसानों को दालों की उन्नत किस्म की जानकारी दी गई। किसानों को प्रमाणित बीज के मूल्य में 50 फीसदी तक छूट दी गई। इससे किसानों को कम मूल्य में अच्छा बीज मिल सका और वे इसकी खेती के प्रति अग्रसर हुए। इसके साथ ही इस योजना के तहत किसानों को पंपसेट के लिए दस हजार रुपये अथवा कुल मूल्य का 50 फीसदी देने की व्यवस्था की गई है।

फसल को कीटनाशक से बचाने के लिए दवाओं एवं बायोजैम आदि पर होने वाले कुल खर्च का 50 फीसदी सहायता स्वरूप प्रदान किया जा रहा है। इसी तरह जीरा टिल सीड ड्रिल, मल्टी क्राप प्लांटर आदि की खरीद पर भी 50 फीसदी तक की सहायता प्रदान की जा रही है। समेकित कीट प्रबंधन के लिए 750 रुपये प्रति हेक्टेयर की सहायता दी जा रही है। इसके अलावा सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि किसान एनएफएसएम के तहत आयोजित होने वाले फारमर्स फील्ड स्कूल में भी भाग ले रहे हैं। इन सभी योजनाओं के कारण किसान तो खेती के प्रति आकर्षित हो रहे हैं। साथ ही, फसल की सुरक्षा व्यवस्था भी बनी हुई है। इससे उत्पादन में काफी बढ़ोत्तरी हुई है। इसी तरह गेहूं और चावल के लिए भी किसानों को उनकी लागत पर 50 फीसदी सब्सिडी का प्रावधान किया गया है।

क्या कहते हैं किसान

जयपुर जिले के बस्सी के किसान महेंद्र शर्मा का कहना है कि इस योजना के जरिए उन्हें काफी लाभ मिला है। अभी तक वह दलहन की काफी कम खेती कर पाते थे। लेकिन समय–समय पर बीज की जानकारी मिलने एवं अन्य सुविधाओं का लाभ मिलने पर इस बार उन्होंने करीब 5 एकड़ खेत में दलहन का उत्पादन किया है। वह बताते हैं कि कृषि विज्ञान केंद्र की ओर से आयोजित प्रशिक्षण में उन्हें अरहर के साथ लोबिया व उड़द की खेती के बारे में जानकारी मिली। वैज्ञानिकों की ओर से बताई गई तकनीकी अपनाने से पिछले वर्ष की अपेक्षा इस बार ज्यादा लाभ मिला है।

इसी तरह जमवारामगढ़ के किसान महेंद्र चौधरी का कहना है कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के बारे में उन्हें कृषि विभाग से जानकारी मिली। कृषि विभाग के अधिकारियों ने बताया कि इस योजना के तहत खेती करने पर बीज के मूल्य का 50 फीसदी सरकारी खर्चा भी मिल जाता है। इसके साथ ही कीट आदि की रोकथाम के लिए दवाओं पर भी अनुदान की व्यवस्था है। इससे जहां लागत काफी कम आती है वहीं फसल का उत्पादन अधिक होता है। कृषि विभाग के अधिकारियों की सलाह पर नैपसैक स्प्रेयर खरीदा, जो हमें आधे मूल्य पर ही मिला। आधा पैसा सरकार की ओर से जमा कराया गया।

इसी तरह आमेर के किसान जयकुमार बुगालिया बताते हैं कि कुछ दिन पहले उन्हें राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के बारे में जानकारी मिली। वह तत्काल कृषि विभाग पहुंचे। जहां कृषि विभाग के अधिकारियों ने इस योजना के बारे में विस्तार से बताया। साथ ही यह भी कहा कि इस योजना के तहत किसानों को दलहन की फसल बोने के लिए खरीदे जाने वाले बीज आधे मूल्य पर मिलते हैं। उन्होंने विभाग की ओर से बताए गए निर्देशों का पालन किया और अरहर का बीज आधे मूल्य पर ले आकर अब बो दिया है। खेत में फसल उग आई है। कृषि वैज्ञानिकों की ओर से खेती के लिए प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है। इससे उम्मीद है कि इस बार फसल को न तो कीट लगेंगे और न ही वह खराब होने पाएगी। यानी उपज पूरी की पूरी मिलेगी।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई–मेल : sangeetayadav.shivam@gmail.com

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता
विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, तल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

मृदा सुरक्षा स

विश्ववि

विज्ञानी डॉ. नीलरत्न ध
उर्वरा शक्ति और पोषक तत्वों की
सदृश्य है। बैंक से यदि मात्र रुपया निका
संचित राशि घटकर एक न्यूनतम सीमा तक पहुं
कर देगा। ठीक इसी प्रकार मृदा बैंक से विभिन्न
होकर निकल जाते हैं। फसलों को उगाने का अ
पोषक तत्वों के लगातार निकलते रहने से मृदा क
की उर्वराशक्ति के संतुलन को कायम रखने
करना आवश्यक होगा जिससे बढ़ती
को चारा उपलब्ध कराने की

यह बताने की कोई आवश्यकता नहीं कि पिछले 35 वर्षों में यूं तो विश्व का खाद्य उत्पादन दुगुने से अधिक हो गया है, फिर भी अभी 55 करोड़ लोग ऐसे हैं, अन्न जिनकी पहुंच से बाहर है। सन् 2020 में सारी दुनिया की आबादी का पेट भरने के लिए खाद्यान्न का उत्पादन वर्तमान स्तर से 65 प्रतिशत अधिक बढ़ाना होगा। उत्पादन के इस स्तर को प्राप्त करने के लिए एक ओर मिट्टी की उर्वरता सुरक्षित रखनी होगी और दूसरी ओर उसका उपयोग इस तरह किया जाना चाहिए कि वह बर्बाद न हो। साथ–ही–साथ पर्यावरण संतुलन रखना होगा जिसमें भूमि के अलावा जल, पेड़–पौधे एवं जलवायु भी सम्मिलित हैं।

खाद्य एवं कृषि संगठन, इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट तथा वर्ल्ड वाच इंस्टीट्यूट ने विश्व के लिए सन् 2010, 2020 एवं 2030 हेतु भोज्य दशा का अनुमान लगाया है। इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट के अनुसार अनाजों की विश्व में मांग वर्तमान एवं सन् 2020 के मध्य 43 प्रतिशत बढ़ जाएगी तथा मांस की 64 प्रतिशत। आगामी 25 वर्षों में यह भोजन अंतर अर्थात् उत्पादन एवं भोजन की मांग के मध्य अंतराल विकसित विश्व में लगभग दुगुना हो जाएगा। वर्ल्ड वॉच इन्स्टीट्यूट का अनुमान है कि सन् 2030 के अंत में भारत को 50 मिलियन टन खाद्यान्न आयात करना होगा, जबकि चीन के लिए अनुमान है कि सन् 2030 तक 200 मिलियन टन उसे आयात करना पड़ेगा। जरा सोचो! यह सब भोजन कहां से आएगा? अतः हमें अपनी पुरानी एवं आगामी योजनाओं पर सोचना होगा।

विश्व की जनसंख्या की अप्रत्याशित वृद्धि से भविष्य में मानव जीवन की दुरूहता की आशंका से प्रायः सभी लोग चिंतित हैं जो वर्तमान में लगभग 65 बिलियन है तथा यू एस सेंसस ब्यूरो के अनुसार सन् 2026 तक विश्व की जनसंख्या

ी खाद्य सुरक्षा

डॉ. रमेश कुमार सिंह

मृदा
ा करते थे कि मृदा से
ध्य किसी बैंक में खाता खोलने के
की प्रक्रिया चलती रहे तो कुछ समय बाद
गी और उस स्थिति में बैंक रुपये देने से मना
क तत्व फसलों के उत्पाद के अनुरूप अवशोषित
ा है मृदा माध्यम से पोषक तत्वों का ह्रास और
चित उर्वरा-शक्ति क्षीण होती जाती है। अतएव मृदा
ोषक तत्वों की वृद्धि के लिए कुछ-न-कुछ
नसंख्या के भोजन-पोषण तथा पशुओं
चित व्यवस्था की जा सके।

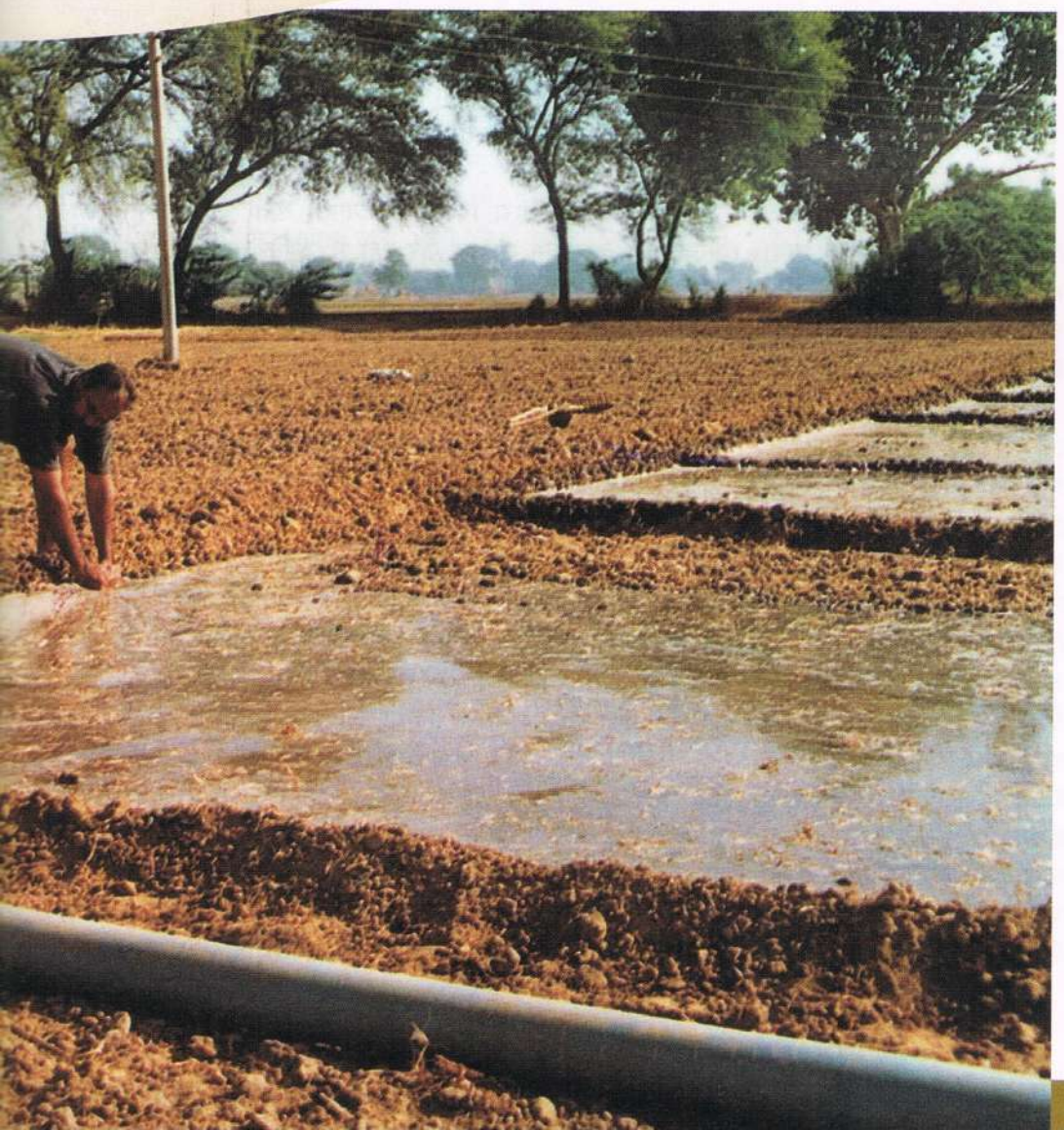

8 बिलियन तथा सन् 2050 तक 93 बिलियन पहुंचेगी। कुछ विचारकों का तो मत है कि 'जनसंख्या विस्फोट' मानवकृत आपदा से कही विकराल रूप ले सकती है। रोटी, कपड़ा और मकान जैसी महत्वपूर्ण आवश्यकताएं भी जनसंख्या वृद्धि के अनुरूप होनी चाहिए अन्यथा एक भयावह स्थिति उत्पन्न हो सकती है। जनसांख्यिकीय गणनाओं के आधार पर सन् 2011 तक भारत की जनसंख्या बढ़कर लगभग 119 करोड़ तक अनुमानित की जा रही है। सर्वप्रथम उस विशाल जनसंख्या को जीवित रखने के लिए भोजन और पोषण की महत्वपूर्ण समस्या का निदान ढूंढ़ना होगा। सुविख्यात कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन के अनुसार अनुमानतः आज जो बच्चा पैदा होगा उसके लिए 0.08 हेक्टेयर भूमि, उसके आवास, विद्यालय, सड़क आदि सुविधाओं के लिए तथा 0.4 हेक्टेयर भूमि खाद्यान्न, फल- सब्जी आदि उगाने के लिए आवश्यक होगा। इस गणना के आधार पर भारत में लगभग 55 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि की आवश्यकता प्रत्येक वर्ष होगी। अब हमें देखना होगा कि कृषि- योग्य इतनी सारी भूमि क्या हमारे देश में बढ़ती हुई जनसंख्या के अनुरूप उपलब्ध हो सकेगी? एक दशक पूर्व लगभग कुल 14123 मिलियन हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि उपलब्ध थी जो 0.37 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति औसतन आंकी गई थी। आज भी कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल लगभग उतना ही है। जबकि जनसंख्या वृद्धि के कारण प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता घटकर केवल 0.2 हेक्टेयर के आसपास पहुंच गई है।

इस विकट परिस्थिति में सघन कृषि प्रणाली को अपनाकर कृषि उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है। 'हरित क्रान्ति' के सफल क्रियान्यवन द्वारा भारत की कृषि उत्पादन क्षमता लगभग तीन-चार गुना बढ़ी है। कृषि उत्पादकता की वृद्धि के लिए कई महत्वपूर्ण कारकों का समन्वय आवश्यक माना गया है ये जैसे उन्नत बीज, सिंचाई, उर्वरक, कीटनाशी रसायन, मृदा आदि जो सभी पर्यावरण के अवयव हैं। इन कारकों में मृदा की भूमिका सभी फसलों के आधार के रूप में निर्विवाद स्वीकार की गई है।

महान दार्शनिक अरस्तू ने तो मृदा को 'फसलों के पेट' की संज्ञा दी है, क्योंकि फसलों का पोषण मृदा माध्यम द्वारा ही संभव है।

मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों के आधार पर फसलों के पोषण के लिए आवश्यक तत्वों की उपलब्धि होती है। इन्हीं पोषक–तत्वों की समुचित उपलब्धि फसल के जीवन–चक्र में पौधे की अवस्था के अनुसार संतुलित मात्रा में मृदा द्वारा प्राप्त होती है। अतः पौधे के लिए मृदा की यह पोषण–क्षमता ही मृदा की उर्वरता कहलाती है। मृदा की उर्वराशक्ति क्षीण हो तो खाद्यपदार्थों की पैदावार में कमी आ जाती है। यदि मृदा की उर्वराशक्ति को समुचित रूप से संतुलित रखने का प्रयास न किया गया तो कालांतर में निश्चित रूप से मृदा ऊसर या बंजर भूमि में परिवर्तित हो जाएगी। फसलों की वृद्धि एवं जीवन–चक्र को पूरा करने के लिए विभिन्न आवश्यक पोषक तत्वों यथा–नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, गंधक, मैगनीशियम तथा कुछ सूक्ष्ममात्रिक तत्वों की आपूर्ति मृदा के माध्यम द्वारा की जाती है। सूक्ष्ममात्रिक तत्वों में प्रायः लौह, तांबा, जस्ता, मैंगनीज, बोरोन, मॉलिब्डनम, क्लोरीन आदि की आवश्यकता पौधे की वृद्धि एवं विकास के लिए निर्धारित की गई है। मृदा की रासायनिक संरचना में ये सभी आवश्यक तत्व विद्यमान होते हैं।

प्रत्येक पौधे को उखाड़ कर यदि हम उसका रासायनिक विश्लेषण करें तो ये सभी आवश्यक तत्व उसमें उपस्थित रहते हैं। कुछ तत्वों की मात्रा अधिक पाई जाती है जिन्हें 'मुख्य' तत्व कहा जाता है। यथा – नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश। इनमें भी नाइट्रोजन की सर्वाधिक मात्रा फसलों के लिए आवश्यक होती है। प्रत्येक 10 किलोग्राम उत्पाद के लिए प्रायः 1 किग्रा. नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। अगर मान लिया जाए कि एक हेक्टेयर भूमि पर प्रतिवर्ष दो या तीन फसलों का कुल उत्पादन 100 क्विंटल हो, तो इस गणना के अनुसार लगभग 10 क्विंटल नाइट्रोजन की आवश्यकता प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष निर्धारित की जाएगी।

भारत सरकार इस दिशा में टिकाऊ खेती को अपनाने का योजनाबद्ध कार्यक्रम संस्तुत कर रही है, ताकि कृषि उत्पादन की वृद्धि के साथ–साथ मृदा संरक्षण एवं पर्यावरण की सुरक्षा भी हो सके।

मृदा उर्वरा आवश्यक तत्वों की उपलब्धि पर निर्भर करती है। साधारणतया फसलों के लिए नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश (एनपीके) की आवश्यकता अन्य तत्वों की अपेक्षा अधिक होती है, जिनकी उपलब्धि प्रायः मृदा की कुल मात्रा की लगभग एक–तिहाई के आसपास होती है। इन मुख्य तत्वों की उपलब्धि मृदा के रासायनिक, भौतिक एवं जैविक गुणों पर आधारित होती है।

सम्भवतः मृदा अभिक्रिया मृदा का अत्यंत महत्वपूर्ण गुण है, जिसके ऊपर पोषक तत्वों की उपलब्धि बहुत–कुछ निर्भर करती है। मृदा अभिक्रिया मृदा की क्षारकता या अम्लता का माप है, जिसे पी.एच. द्वारा प्रदर्शित किया जाता है तथा जो हाइड्रोजन आयन की सक्रियता का ऋणात्मक लघुगुणक होता है। अधिकांश पौधे पी. एच 6.0 और 7.5 के बीच अच्छी तरह उगते हैं। इससे अधिक और कम दोनों मान पादपवृद्धि पर अच्छा प्रभाव नहीं डालते।

वर्तमान में भूमि–संरक्षण कार्यक्रमों को अपनाकर मृदा अपरदन को कम करने का प्रयास आवश्यक माना गया है। मृदा की ऊपरी

परत का धीरे–धीरे क्षरण तेज बारिश और तूफानी हवाओं के प्रभाव द्वारा होता है। जलवायु की समुचित दशाओं तथा वनस्पति आवरण होने पर प्रकृति को एक इंच (25 सेमी.) मोटी परत बनाने में लगभग 800–1000 वर्ष लगते हैं, किन्तु एक ही आंधी या बाढ़ में यह मिट्टी बह जाती है जो मृदा उर्वरता को प्रभावित करती है। मृदा के कणों के स्थानान्तरण के साथ–साथ उनमें निहित उपजाऊ तत्वों की भी कमी हो जाती है। अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कृषि विज्ञानी डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन के अनुसार प्रतिवर्ष भारत में अपरदन से लगभग 25 लाख टन नाइट्रोजन, 33 लाख टन फॉस्फेट और 25 लाख टन पोटाश के समकक्ष उर्वरकों की क्षति आंकी गई है। इन आंकड़ों के आधार पर मृदा संरक्षण की आवश्यकता मृदा को स्थायी रूप से उपजाऊ रखने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें संदेह नहीं कि भूमि–संरक्षण के अभाव में धरती की हरीतिमा धीरे–धीरे लुप्त हो जाएगी और चारों ओर बंजर और ऊसर भूमि का विस्तार होगा। वृक्षारोपण, जलाशयों के निर्माणं, जल–निकास की व्यवस्था, भूमि की ढलान को कम करने के लिए ट्रेसिंग कन्टूरिंग आदि कार्यक्रमों को अपनाकर मृदा संरक्षण सम्भव है। यदि हमें भविष्य में अपनी आने वाली संतानों को भोजन प्रदान करने की जरा भी चिंता है तो निःसंदेह मिट्टी की रक्षा करनी होगी। उचित ढंग से फसल–चक्र का प्रयोग करने से अपरदन कम किया जा सकता है। क्षारीय एवं लवणीय मृदाओं का सुधार करना भी मृदा–संरक्षण कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण अंग है। मृदा प्रदूषण की संभावना से मृदा को मुक्त रखना मृदा संरक्षण कार्यक्रम का आवश्यक अंग है। औद्योगिक कूड़े–कपड़े, सीवेज–सलज में पाए जाने वाले भारी तत्व, अकार्बनिक विषैले यौगिक, कार्बनिक अनुपयोगी पदार्थ, कार्बनिक कीटनाशी तथा रेडियोसक्रिय अपशिष्ट पदार्थ मृदा को प्रदूषित करते हैं। मृदा को प्रदूषण मुक्त बनाने के लिए अनेक वैज्ञानिक इस दिशा में शोध कर रहे हैं। बायोडिग्रेडेशन की क्रिया मृदा को प्रदूषण मुक्त रखने में काफी सहायक सिद्ध हुई है।

कृषि उत्पादन की सर्वप्रथम आवश्यकता पानी मानी गई है, क्योंकि पौधे का लगभग 90 प्रतिशत भाग जल से बना होता है। जल मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों के घोलक एवं वाहक का कार्य करता है। पौधे के प्रायः सभी क्रियाकलापों में जल की आवश्यकता होती है। इसी कारण जल को पौधे का प्रथम भोजन कहा गया है। अतः मृदा में समुचित मात्रा में आर्द्रता का होना अत्यन्त आवश्यक माना गया है। वाष्पोत्सर्जन तथा वाष्पीकरण द्वारा मृदा से निरन्तर जल का ह्रास होता रहता है। मृदा में अधिक एवं कम नमी दोनो ही मृदा गुणों तथा पौधे की वृद्धि के लिए हानिकारक हैं। सिंचाई की विधि का चुनाव भूमि की विशेषताओं, बोई जाने वाली फसलों, सिंचाई की नालियों की क्षमता, सिंचाई स्रोतों के आकार, सिंचाई जल के गुण तथा जलवायु की परिस्थितियों के आधार पर किया जाता है। सिंचाई के लिए सबसे उपयुक्त विधि वही मानी जाती है जिसमें जल का ह्रास कम–से–कम हो तथा जल पर नियंत्रण रखा जा सके। तभी जल उपयोग क्षमता बढ़ाई जा सकेगी। शुष्क क्षेत्रों में जहां उपजाऊपन का कोई साधन उपलब्ध न हो, वहां मृदा की नमी सुरक्षित रखने के लिए प्रायः खरपतवारों को उखाड़कर उन्हें 'मल्च' के रूप में प्रयोग करते हैं। जल निकास उचित न होने पर मृदा में उपस्थित पोषक पदार्थों का निक्षालन हो सकता है और जल का आधिक्य होने से उचित वायु संचार नहीं हो सकता। वायु की कमी होने से कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा बढ़ जाती है जिससे पौधें की जड़ों में वृद्धि होती है। लगातार जुताई करने से मृदा की संरचना खराब हो सकती है। अतः अधिक जुताई से मृदा की उर्वरता पर हानिकारक प्रभाव भी पड़ सकता है।

मृदा परीक्षण के द्वारा मृदा में उपस्थित कुल एवं उपलब्ध पोषक तत्वों का मूल्यांकन फसलों के आधार पर करने के पश्चात् उर्वरकों का प्रयोग संतुलित मात्रा में करना उचित होता है। मनमाने ढंग से उर्वरकों का प्रयोग मृदा उर्वरता के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है। पौधे की आवश्यकता के अनुसार मृदा में उचित प्रकार के उर्वरक का उचित मात्रा में प्रयोग करना ही श्रेयस्कर है।

उर्वरकों के अधिक मात्रा में डालने से मृदा पर बुरा प्रभाव देखा गया है, विशेष रूप से सूक्ष्ममात्रिक उर्वरकों द्वारा। इसलिए उर्वरकों के प्रयोग में सतर्कता बरतना अत्यन्त आवश्यक है।

कृषि उत्पाद को बढ़ाने के लिए सुझाव

- अधिक उपज देने वाली किस्मों में सुधार एवं उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी।
- वर्षा आधरित क्षेत्रों में संकर किस्मों को विकसित करने एवं प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।
- कृषि में विविधिकरण द्वारा विभिन्न फसलों के क्षेत्र को बढ़ाने की जरूरत हैं।
- वृक्षों, पशुधन के साथ–साथ फसलों की उत्पादकता के साथ–साथ सघन फसल पद्धतियां अपनानी होंगी।
- मृदा की घटती उर्वरता को रोकने हेतु ऑर्गेनिक फार्मिंग, जैव उर्वरकों तथा वर्मी–कम्पोस्ट को अपनाना होगा।
- एकीकृत प्रबन्धन जैसे–पोषण प्रबंधन पद्धति (आई.एन.एम. एस), एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम), एकीकृत जल प्रबंधन (आई.डब्ल्यू.एम), एकीकृत बीज प्रबंधन (आई.एम.एम.), एकीकृत फार्मिंग प्रबंधन (आई.एफ.एम.) तथा एकीकृत फसल प्रबंधन (आई.सी.एम.) पर जोर देना होगा।

यदि हम उपरोक्त बिन्दुओं पर ध्यान देकर खेती करे तो नियंत्रित जनसंख्या के लिए सतत् हरित–क्रान्ति लाकर भोजन सुनिश्चित किया जा सकता है।

(लेखक जी.एन.कालेज, बिहार में अर्थशास्त्र के व्याख्याता हैं।)

बाढ़ आपदा के समय खाद्यान्न सुरक्षा

जितेन्द्र द्विवेदी

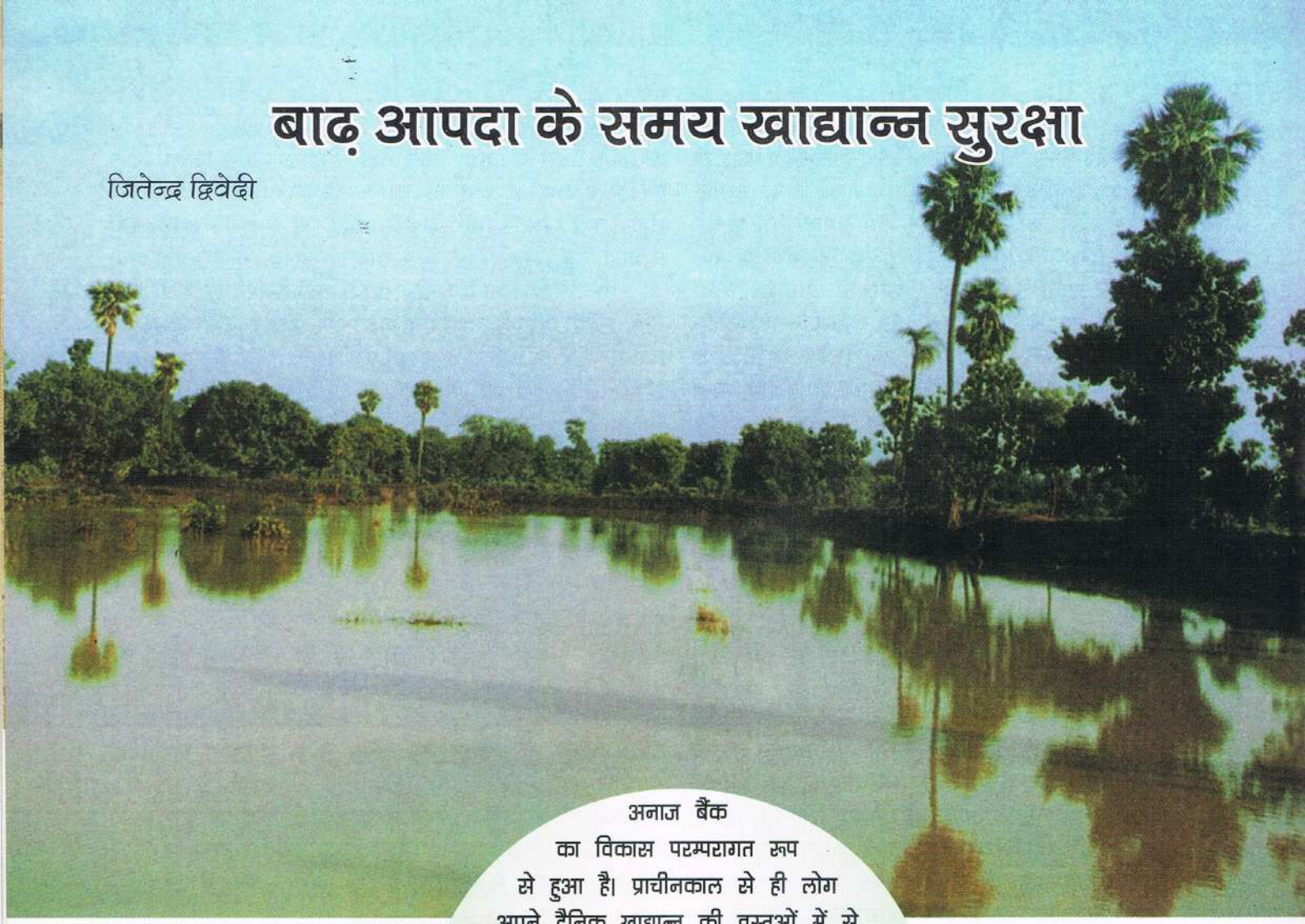

अनाज बैंक का विकास परम्परागत रूप से हुआ है। प्राचीनकाल से ही लोग अपने दैनिक खाद्यान्न की वस्तुओं में से प्रतिदिन थोड़ा-सा निकाल कर अलग रख लेते थे जोकि घर में अनाज न रहने की दशा में, कोई आपदा आदि आने की स्थिति में काम आता था। हिन्दू, मुस्लिम सभी समुदाय में आज भी मुट्ठी दान के रूप में उक्त प्रथा प्रचलित है। इसी तर्ज पर अनाज बैंक बाढ़ आपदा के समय परिवारों की खाद्यान्न सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए हैं।

खाद्य सुरक्षा

अनाज बैंक बाढ़ आपदा के समय परिवारों की खाद्यान्न सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए हैं। अनाज बैंक की स्थापना हेतु थोड़ा ऊंचे स्थल का चयन किया जाता है ताकि बाढ़ आने पर उक्त बैंक प्रभावित न हो।

आकार

अनाज बैंक बनाने के लिए दो प्रकार की संरचनाओं का उपयोग किया जाता है। प्रथम संरचना में पके बांस के छिलकों को पतला–पतला चीर कर फट्टी बना लेते हैं और 6–7 फुट का एक बेलनाकार ढांचा तैयार कर लेते हैं। इस तैयार ढांचे को गोबर व मिट्टी के मिश्रण से मोटी सतह के साथ लेपन कर दिया जाता है। पुनः इस बेलनाकार ढांचे के ऊपर घास व फूस का गुम्बजनुमा छज्जा तैयार किया जाता है। इस विधि में लागत बहुत ही कम पड़ती है। अतः गरीब समुदाय के लिए यह सर्वाधिक उपयुक्त होता है। द्वितीय संरचना में सीमेंट और ईंट का 4 इंच मोटा व 6–7 फुट ऊंचा बेलनाकार ढांचा तैयार किया जाता है, जिसकी छत पूर्व की तरह घास–फूस की होती है। इस विधि में लागत थोड़ी अधिक लगती है। परन्तु यह ढांचा अधिक मजबूत व सुरक्षित होता है।

भंडारण की प्रक्रिया

इस अनाज बैंक में सामान्यतः गेहूं व धान का भंडारण किया जाता है। इसके अतिरिक्त समुदाय सामूहिक तौर पर जो खेती करता है, उसका भी भंडारण किया जाता है, जैसे–मक्का, जौ आदि।

समुदाय में फसल कटने के बाद आर्थिक रूप से सबसे कमजोर सदस्य को आधार मानकर अनाज की मात्रा का निर्धारण किया जाता है। अर्थात यदि वह व्यक्ति 16 से 20 किग्रा. अनाज रखने में सक्षम होता है, तो वही आधार सभी सदस्य अपनाते हैं और एक ही दिन में सभी अपने–अपने अनाज बैंक में रख देते हैं।

नियम

सामान्य समय में यदि किसी सदस्य के घर खाद्यान्न समाप्त हो जाता है, तो उसकी वास्तविक जरूरत को देखते हुए अनाज बैंक से अनाज उपलब्ध करा दिया जाता है और अगली फसल कटने पर उसका सवाया (25 प्रतिशत अतिरिक्त) वापस कराया जाता है।

आपदा के समय सबको अनाज आवश्यकतानुसार वितरण किया जाता है। यदि आपदा नहीं आती है, तो बाजार से खरीदकर खाने वाले सदस्यों को बाजार भाव से कम मूल्य पर अनाज दिया जाता है। जो अनाज वितरण व आन्तरिक विक्रय के बाद बच जाता है, उसे बाजार में बेचकर प्राप्त पैसे से गेहूं अथवा धान खरीद कर अनाज बैंक में रख दिया जाता है।

ग्राम मनोहर चक, ब्लॉक पनियरा, जनपद महराजगंज के आधार ग्राम संसाधन केन्द्र के 57 सदस्यों (35 महिलाएं एवं 22 पुरुषों) ने वर्ष 2007 में अनाज बैंक बनने के पहले वर्ष में 16–16 किग्रा. गेहूं रबी मौसम में एकत्रित किया और स्वयं द्वारा निर्मित बखारी में रख दिया, जिसे उन्होंने अनाज बैंक की संज्ञा दी। इस अनाज बैंक के संचालन के लिए आधार ग्राम संसाधन केन्द्र के 3 महिलाओं एवं 2 पुरुषों की एक संचालन कमेटी का निर्माण किया गया जिनका निर्णय सर्वमान्य होता है। उन्होंने चर्चा कर कुछ नियम बनाए, जिसे सब पर लागू करने का निर्णय लिया। कुछ महत्वपूर्ण निर्णय निम्न हैं–

- यदि किसी सदस्य को अनाज की आवश्यकता पड़ती है तो उसे अनाज दिया जाता है और वह अगली फसल कटने पर सवाया (25 प्रतिशत अतिरिक्त) अनाज, अनाज बैंक को वापस करता है।
- अगर कोई व्यक्ति अनाज खरीदना चाहता है, तो उसे रखरखाव के खर्चे को जोड़कर सीजन के मूल्य के अनुसार कुछ कम मूल्य में अनाज बेचा जाता है।
- अनाज का भंडारण सभी सदस्यों द्वारा एक निश्चित समय में ही करना अनिवार्य होता है।
- अगर किसी सदस्य के पास अनाज नहीं उपलब्ध है, तो वह उसके बदले पैसा भी जमा कर सकता है।
- समूह की खाद्यान्न की आवश्यकता पूर्ति करने के पश्चात् बचे अनाज को बेच दिया जाता है और अगले सीजन में उसी का अनाज खरीद कर पुनः रखा जाता है अथवा बेचा जाता है। प्राप्त लाभ में पूरे समूह की हिस्सेदारी होती है।
- इस लेन–देन के लिए अलग से रजिस्टर बनाया गया है।

किसान के अनुभव

महाराजगंज जनपद का विकास खण्ड पनियरा रोहिन नदी एवं नालाओं से आच्छादित है जिसके कारण यहां बाढ़ की सम्भावना हमेशा बनी रहती है। विकास खण्ड पनियरा में रोहिन नदी के बीच में पड़ने वाले लक्ष्मीपुर, मनोहर चक एवं लालबढ़ेहर गांव बाढ़ से अधिक प्रभावित हैं। 1998 की बाढ़ विभीषिका से ग्रसित महाराजगंज जनपद का विकास खण्ड पनियरा अति जलप्लावित था। इस इलाके में बाढ़ विभीषिका की सम्भावना प्रतिवर्ष बनी रहती है।

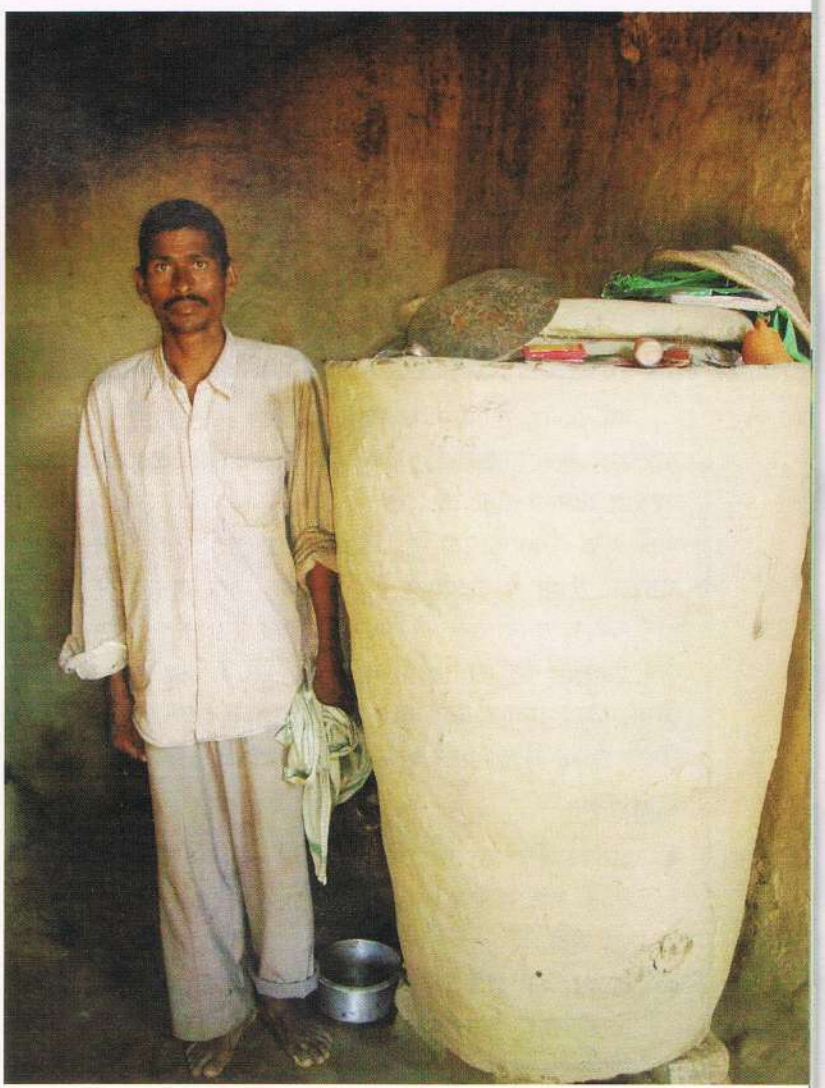

वर्ष 2007 में ग्राम लक्ष्मीपुर की 57 महिलाओं, पुरुषों एवं गोरखपुर एनवायरमेंटल एक्शन ग्रुप ने आपसी विचार–विमर्श के पश्चात अनाज बैंक की परिकल्पना को साकार रूप दिया और मात्र एक सीजन–रबी में 492 किग्रा. गेहूं एकत्र किया था। अगस्त, 2008 में लक्ष्मीपुर गांव भयंकर जल जमाव से प्रभावित होने की दशा में उक्त अनाज बैंक की सार्थकता सामने आयी, जब एकत्रित गेहूं से 10 परिवारों को इस अनाज बैंक से अनाज दिया गया। अनाज बैंक की उपयोगिता को देखते हुए अन्य गांवों मे भी इसके लिए पहल शुरू हुई।

सावधानियां

- अनाज बैंक हेतु हमेशा ऊंचे स्थल का चयन किया जाता है ताकि गांव में बाढ़ का पानी आ जाने पर अनाज बैंक सुरक्षित रह सके।
- सुरक्षा की दृष्टि से अनाज बैंक का निर्माण गांव के मध्य किसी ऊंचे स्थान पर किया जाता है, क्योंकि गांव से बाहर रहने पर अनाज चोरी हो जाने का भय बना रहता हैं।
- गांवों में जहां बाढ़ का डर रहता है, वही गर्मी के दिनों में आग लगने की घटनाएं भी प्रमुखता से होती हैं। अतः अनाज बैंक का निर्माण छप्पर के मकानों से दूर ही होता है।
- अनाज बैंक के अन्दर प्रति सीजन गोबर व मिट्टी से लेप किया जाता है, जिससे अनाज मे सीलन नहीं लगता है।
- गेहूं का भण्डारण करते समय नीम की पत्ती, प्याज व राबिश मिलाकर रखने से कीड़ा, घुन आदि लगने का भय नहीं रहता है।
- अनाज रखते समय बखार की सतह पर कम से कम आधा फुट भूसा, उसके ऊपर सूती चट्टी को रखते हैं ताकि सीलन से अनाज का बचाव हो सके।
- अनाज बैंक में रखे धान अथवा गेहूं कौ प्रति तीन–तीन माह पर उलटने के अतिरिक्त सावधानी रखी जाती है ताकि अनाज सुरक्षित रहे।

अच्छी सेहत इंसान की बुनियादी ज़रूरतों में से एक हे। हमारे राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन का मकसद ग्रामीण सार्वजनिक स्वास्थ्य के बुनियादी ढांचे को मज़बूत करना है। हम राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना का विस्तार करेंगे ताकि उसमें गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले हर परिवार को शामिल किया जा सके।

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह

कठिनाईयां

- संचालन कमेटी द्वारा हर तीन माह में अनाज की पलटान न हो पाने के कारण अनाज में सीलन लग जाता है।
- अनाज पलटने के लिए समुदाय के कुल 57 सदस्यों का एक साथ मिल पाना दुष्कर कार्य है।
- एक साथ कई सदस्यों द्वारा अनाज की मांग न होने के कारण भी अनाज के सील जाने का खतरा रहता है। अर्थात जितनी बार सदस्यों द्वारा मांग होगी, उतनी बार बखार को खोलना पड़ता है, जिससे अनाज के सीलन का खतरा बना रहता है।
- बखार के ऊपरी सिरे पर खोप की वजह से चूहों का आतंक हो जाता है।
- अनाज बैंक में एक ही प्रजाति का अनाज संग्रहित न होने के कारण भी रखरखाव में कठिनाई होती है।

सीमाएं

- अनाज बैंक की अधिकतम क्षमता 45 कुन्तल तक ही सीमित है।
- एक ही अनाज बैंक होने के कारण रबी व खरीफ के मौसम में संग्रहित अनाज को निकालने की मजबूरी हो जाती है।

सामुदायिक खाद्यान्न बैंक टिकाऊ खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के उपकरण के रूप में

सरकारी एवं विश्व खाद्य कार्यक्रम जैसे दानदाताओं से अनुदान लेकर शुरुआती आपूर्ति करके ग्रामीण स्तर पर सामुदायिक खाद्यान्न बैंक शुरू किये जा सकते हैं। बाद में ऐसे बैंकों को स्थानीय स्तर पर अनाज खरीदकर तथा पर्यावरण विकास के बदले अनाज तथा पोषण के लिए खाद्यान्न कार्यक्रमों हेतु सरकारी एवं अंतर्राष्ट्रीय सहायता से इन्हें चालू रखा जा सकता है। यह बैंक पोषण की खाई पाटने के साथ–साथ सामाजिक एवं लैंगिक समानता, पर्यावरण एवं रोजगार उपलब्ध कराने की बुनियादी इकाई सिद्ध हो सकते हैं। इन्हें चक्रवात, बाढ़, अकाल तथा भूकम्प जैसे आपातकाल से निपटने के लिए भी समर्थ बनाया जा सकता है।

डा. शिराज वजीह, अध्यक्ष, गोरखपुर एनवायरमेंटल एक्शन ग्रुप का कहना है कि सामुदायिक खाद्यान्न बैंकों का प्रबन्ध स्थानीय महिलाओं एवं पुरुषों के साथ अलग–अलग स्वयं–सहायता समूह भी कर सकते हैं। इससे भूख से लड़ने के लिए स्वयंसहायता क्रान्ति में मदद मिलेगी। इसके लिए सर्वांगीण निर्देशन एवं निगरानी बहुभागीदार सामुदायिक खाद्यान्न बैंक परिषद द्वारा प्रदान की जा सकती है।

(लेखक एनवायरमेंटल एक्शन ग्रुप में मीडिया समन्वयक हैं।)

ई–मेल : jitendraapf@gmail.com

सदस्यता कूपन

मैं/हम का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : **कुरुक्षेत्र** एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

बंजर भूमि का निर्माण और सुधार कार्यक्रम

मधु रानी

हमारे देश का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 328.73 मिलियन हेक्टेयर है जिसमें से 141.89 मिलियन हेक्टेयर पर खेती की जाती है। राष्ट्रीय दूरसंवेदी एजेंसी (एन.आर.एस.ए.) के अनुसार देश में कुल 55.27 मिलियन हेक्टेयर बंजर भूमि है। कुल कृषित क्षेत्र का लगभग 58 मिलियन हेक्टेयर सिंचित है और शेष 84 मिलियन हेक्टेयर वर्षा आधारित है। तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण भूमि की उपलब्धता दिनोंदिन घटती जा रही है। वर्ष 1951 में प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता 0.90 हेक्टेयर से घटकर वर्ष 2001 में 0.32 हेक्टेयर रह गई है जिसके वर्ष 2025 में घटकर 0.23 हेक्टेयर होने का अनुमान लगाया गया है। देश की बढ़ती जनसंख्या की जरूरतों को पूरा करने के लिए बंजर भूमि को सुधार कर खेती योग्य बनाने की नितान्त आवश्यकता है। इन समस्याग्रस्त भूमियों को सुधार कर फसलोत्पादन के अन्तर्गत लाने से जहां एक ओर अतिरिक्त खाद्य, खाद्य पदार्थों, रेशा, चारा, ईंधन और ऊर्जा की मांग पूरी करने में मदद मिलेगी, वहीं दूसरी तरफ बंजर भूमि सुधार और प्रबन्धन से भूमि व जल जैसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण से गांवों में बेहतर पर्यावरण प्रदान किया जा सकता है।

बंजर भूमि प्रमुख रूप से देश के सभी प्रान्तों में फैली हुई है। ये भूमियां विभिन्न विकारों से ग्रस्त होती हैं। इस प्रकार की भूमियों में फसल उत्पादन न के बराबर होता है। जल निकास का उचित प्रबन्ध न होने के कारण वर्षा ऋतु में इन भूमियों में पानी भर जाता है। जिसके परिणामस्वरूप अवांछित खरपतवारों, घासों व हानिकारक झाड़ियों के फैलाव को बढ़ावा मिलता है। इस तरह की भूमियां छोटे किसानों के पास हैं जो समाज के अनुसूचित जातियों, जनजातियों या आर्थिक रूप से पिछड़े व उपेक्षित हैं। बंजर भूमि सुधार कार्यक्रम से गरीबी

उन्मूलन के साथ–साथ समाज में समानता की भावना भी पैदा होती है। इसके अलावा बंजर भूमि की उत्पादकता बढ़ाकर रोजगार सृजन की सम्भावना भी बढ़ायी जा सकती है।

बंजर भूमि से अभिप्राय

विकास की आवश्यकताओं एवं जनसंख्या दबाव के कारण भूमि का गैर कृषि कार्यों में उपयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप कृषि योग्य भूमि सिकुड़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में सघन कृषि अपनाना अति आवश्यक हो गया है। सघन खेती में दोषपूर्ण सिंचाई प्रणाली, रासायनिक उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग तथा कीटनाशियों का अन्धाधुन्ध प्रयोग हो रहा है। जिसके कारण उपजाऊ कृषि भूमि बंजर भूमि में तब्दील होती जा रही है। इसके अलावा भारतीय कृषि के समक्ष अनेक समस्याएं हैं जिनमें से प्रमुख हैं– बिगड़ता मृदा स्वास्थ्य, धीमी विकास दर, किसानों द्वारा आत्महत्या, विशेष आर्थिक क्षेत्र, ऋण ग्रस्तता और विश्व व्यापार संगठन का दोहरा रवैया इत्यादि।

बंजर भूमि का निर्माण करने वाले प्रमुख कारक

भूमि हमारी जीवनदायिनी है परन्तु दुर्भाग्यवश यह निम्नीकृत व प्रदूषित होती जा रही है। इसके लिए जिम्मेदार कारकों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है।

जंगलों की कटाई

वनों की कटाई का सीधा प्रभाव मृदा अपरदन पर पड़ता है। वृक्ष वर्षा जल के अपधावन को नियन्त्रित करने में सहायक होते हैं। वनों की कटाई से अपधावन की गति बढ़ जाती है। पेड़ वर्षा के प्रहार को कम करने, मृदा अपरदन रोकने तथा मृदा नमी संरक्षण में मदद करते हैं। वनों के ह्रास से पारिस्थितिक संतुलन प्रभावित होता है। जिसका प्रभाव मौसम पर भी पड़ता है। वनों से प्राप्त जैव अवशिष्ट पदार्थों के अपघटन से मृदा कण संगठित हौते हैं। दूसरी तरफ वनों की कटाई से जीवांश पदार्थों के अभाव में मृदा अपरदन तीव्र गति से होता है। इसके अलावा वन रहित क्षेत्रों में तापमान वृद्धि से मृदा का क्षरण और विघटन होता है। ढीली मृदाओं को हवा आसानी से उड़ा ले जाती है।

जल–भराव

देश की कुल कृषि योग्य भूमि का 8.3 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल जल–भराव से ग्रसित है जिसमें फसल उत्पादन लाभदायक एवं सम्भव नहीं हो पाता है। जलभराव मृदाओं में मुख्य रूप से धान उगाया जाता है। इस प्रकार की समस्या पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा तथा उत्तर–पूर्वी राज्यों में पायी जाती है। असमतल भू–क्षेत्र वर्षा जल से काफी समय तक जलमग्न रहकर बंजर भूमियों का निर्माण करता है। वर्षा ऋतु में इन भूमियों में बहुत अधिक जल भर जाता है तथा ये अत्यधिक चिपचिपी हो जाती हैं। ग्रीष्म ऋतु में ये अधिक कठोर और चौड़ी दरारों युक्त हो जाती हैं। अतः इनमें दोनों ऋतुओं में कृषि–क्रियायें करना बड़ा कठिन होता है। इन भूमियों की अभिक्रिया अम्लीय होती है तथा पी.एच. मान 6.0 के आस–पास होता है। इनमें प्रमुख रूप से घास व खरपतवार उगे रहते हैं। उत्तर भारत के नहरी क्षेत्र इस समस्या से अधिक प्रभावित हैं क्योंकि इस प्रकार की जलाक्रान्ति नहरों के दोनों किनारों से जल रिसाव के कारण होती है। अत्यधिक पानी से सिंचाई व बांधों से पानी का रिसाव भी जलमग्नता का प्रमुख कारण है।

झूम खेती

एक क्षेत्र या स्थान पर सघन खेती करके जब मृदा की उर्वरता समाप्त हो जाती है तो दूसरे क्षेत्रों में फसल लेना झूम या स्थानान्तरित खेती कहलाती है। जिसका महत्वपूर्ण प्रभाव मृदा अपरदन पर पड़ता है। इस प्रकार की खेती प्रमुख रूप से पूर्वी

जलभराव वाली मृदा में पानी की कमी होने पर पड़ती दरारें

क्षारीय मृदा में धान की रोपाई से पूर्व पडलिंग करता ट्रैक्टर

राज्यों, मध्य प्रदेश उड़ीसा तथा हिमाचल प्रदेश में की जाती है। मध्य प्रदेश में इसे पोदू, असम में झूम, शिलांग में तोग्या तथा हिमाचल प्रदेश में खील कहा जाता है। इस पद्धति में नये क्षेत्रों को प्राप्त करने के लिए वनों को काटकर जला दिया जाता है तथा उस पर 4–5 वर्षों तक खेती की जाती है। इसके बाद मृदा उर्वरता कम हो जाने पर इसे 10–12 वर्षों के लिए परती छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार मृदा अपरदन की सम्भावना बढ़ जाती है जो बंजर भूमि निर्माण को बढ़ावा देता है।

दोषपूर्ण कृषि–क्रियाएं

दोषपूर्ण कृषि क्रियाओं के कारण भी बंजर भूमि निर्माण को बढ़ावा मिलता है। परम्परागत तरीकों से की जाने वाली खेती में भूमि कमजोर हो जाती है। खेतों की बार–बार जुताई करना, दोष पूर्ण सिंचाई प्रणाली अपनाना, उर्वरकों का अनुचित व असंतुलित प्रयोग करना व गलत भू–परिष्करण क्रियायें उर्वर भूमि को डिग्रेडिड कर रही हैं। इसी प्रकार लगातार एक ही तरह की फसलों की खेती करने से भी भूमि कमजोर हो जाती है। यह समस्या उन फसलों के साथ है, जो अधिक गहरी जुताई पसन्द करती है। पर्वतीय क्षेत्रों में ढालू भूमि पर गहरी जुताई करने तथा ढाल के साथ ऊपर से नीचे की ओर जोतने से भी वर्षा ऋतु में मृदा कटाव की सम्भावना रहती है। पिछले तीन दशकों से खेती में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों व संकर बीजों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। इससे मृदा की उर्वरा शक्ति व स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। मृदा में पाये जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीवाणु व केंचुए नष्ट होते जा रहे हैं। जिससे मृदा की क्षीणता के कारण पैदावार में कमी व गुणवत्ता में भी गिरावट आई है। इस तरह दोषपूर्ण कृषि क्रियायें अपनाने से भूमि अपने गुण खो देती है और उसका निम्नीकरण होने लगता है।

मरूभवन (डेजर्टिफिकेशन)

पश्चिमी राजस्थान का लगभग 68 प्रतिशत भाग मरूभवन प्रक्रिया से प्रभावित है। भारत में इसका क्षेत्र राजस्थान के बाड़मेर, जैसलमेर व बीकानेर इलाकों में स्थित है। पश्चिमी राजस्थान में रेतीली मिट्टी की प्रमुखता है। यह मिट्टी बारीक रेतीली और गहरी होती है। इसमें पानी को संचय करने की क्षमता कम होती है। इन क्षेत्रों की भूमियों में जीवांश पदार्थ का अभाव रहता है। शुष्क व अर्ध–शुष्क क्षेत्रों की मृदाओं में वाष्पीकरण अत्यधिक होने के कारण घुलनशील लवण ऊपर आ जाते हैं जिससे मृदा लवणीय बन जाती हे। इन क्षेत्रों में रेत के बड़े–बड़े टीले पाये जाते हैं। यह क्षेत्र वायु अपरदन से अत्यधिक प्रभावित है। ग्रीष्म ऋतु की तेज हवायें काफी मात्रा में मृदा कणों को दूर–दूर उड़ा ले जाती हैं। रेतीले टीले अधिकतर खेतों को ढके हुए हैं। रेत के जमाव के कारण मृदा की उर्वरता तथा फसल उत्पादन में कमी आ जाती है। इन रेतीली मृदाओं में 30 से 50 से.मी. गहराई पर कठोर पटल मिलता है जिससे पौधों की जड़ें तथा जल प्रवेश नहीं कर पाते हैं। इन क्षेत्रों में भूजल 300–400 फीट गहरा मिलता है तथा वह भी लवणीय एवं क्षारीय है। वनस्पति कहीं–कहीं व कांटेदार है। यदि प्राकृतिक संसाधनों का क्षमता से अधिक उपयोग किया जाता है तो मरूभवन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है।

लवणीयता/क्षारीयता

देश के विभिन्न भागों में 6.7 मिलियन हेक्टेयर भूमि लवणीयता/क्षारीयता से प्रभावित है जिसमें से लगभग 56 प्रतिशत भाग क्षारीय है। लवणीय पानी से विस्तृत भू–भाग में सिंचाई होती है। इससे मृदा में लवणों की मात्रा में वृद्धि हो जाती

है। लवणीयता की समस्या की शुरुआत नहरों द्वारा सिंचाई करने के साथ हुई। यह समस्या पंजाब, हरियाणा व उत्तर प्रदेश के नहरी क्षेत्रों में उग्र होती जा रही है। नहरों के आसपास के खेतों में हानिकारक लवणों का संचय देखा जा सकता है। स्थानीय भाषा में इन्हें रेह, खार या नमकीन मृदाएं कहा जाता है। इन मृदाओं में सल्फेट एवं क्लोराइड के घुलनशील लवणों की अधिकता रहती है। इनका निर्माण खराब जल निकास, नदी–नालों व नहरों के पानी से सिंचाई करने पर होता है। साथ ही अत्यधिक मात्रा में सिंचाई करने से भू–जल स्तर ऊपर आ जाता है। प्रायः किसान खेतों में नहर का पानी काट देने के बाद सिंचाई की मात्रा पर ध्यान नहीं देते हैं। खेतों में आवश्यकता से अधिक पानी भर जाता है जो कि लवणीयता उत्पन्न करने में सहायक है। लवणों की सान्द्रता बढ़ने पर मृदा धीरे–धीरे बंजर बन जाती है। राजस्थान, पंजाब, गुजरात व हरियाणा के अनेक क्षेत्रों में प्राकृतिक लवणीयता पाई जाती है। यह भू–भाग लवणों की अधिकता के कारण वनस्पति विहीन हैं। कहीं–कहीं पर बिलायती बबूल तथा लवण सहन करने वाली वनस्पतियां आच्छादित हैं।

अम्लीयता

हमारे देश में लगभग 25.9 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र मृदा अम्लीयता से प्रभावित है। समस्याग्रस्त मृदाओं में अम्लीय मृदाओं का प्रमुख स्थान है। देश के उत्तरी–पूर्वी राज्यों, पश्चिमी बंगाल, बिहार और उड़ीसा में अम्लीयता की समस्या प्रमुख रूप से पाई जाती है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, केरल, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र के तटीय क्षेत्रों में अम्लीयता की समस्या से मृदा ग्रसित है। मृदा अम्लीयता मृदा गुणों व मृदा स्वास्थ्य को प्रभावित करती है जिसका पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अम्लता के कारण मृदाओं में एल्यूमीनियम, मैंगनीज व आयरन की विषालुता पौधों की वृद्धि व विकास में बाधक रहती है। अम्लीय वर्षा, अम्लीय उर्वरकों जैसे अमोनियम सल्फेट तथा अमोनियम नाइट्रेट का लगातार प्रयोग मृदा के पी.एच. मान को कम करके अम्लीयता उत्पन्न करने में विशेष योगदान देता है। मृदा से कैल्शियम व मैग्निशियम का अधिक मात्रा में अवशोषण करने वाली फसलों जैसे आलू, तम्बाकू व चुकन्दर को लगातार उगाने से मृदा में अम्लीयता बढ़ने की अधिक सम्भावना रहती है। क्वार्टजाइट चट्टानों से होकर बहने वाली जल धारा का पी.एच. प्रायः अम्लीय होता है। अतः यह जल सामान्य मृदाओं को अम्लीय बना देता है।

बंजर भूमि सुधार एवं प्रबन्धन

बंजर भूमियों के विकास के लिए भारत सरकार के विभिन्न मन्त्रालयों जैसे ग्रामीण विकास मंत्रालय में भूमि संसाधन विभाग, कृषि मंत्रालय, पर्यावरण और वन मंत्रालयों द्वारा बंजर भूमि की कम हो रही उत्पादकता तथा प्राकृतिक संसाधनों की क्षति पर रोक लगाने के उद्देश्य से विभिन्न कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :

बारानी क्षेत्रों के लिए राष्ट्रीय जलागम (वाटरशेड) विकास परियोजना; नदी वेली प्रोजेक्ट और बाढ़ सम्भावित क्षेत्र में मृदा और जल संरक्षण; क्षारीय मृदाओं का सुधार; झूम खेती क्षेत्रों में जलागम विकास परियोजना; सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम; मरूस्थल विकास कार्यक्रम।

एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम के तहत उपर्युक्त परियोजनाओं के अन्तर्गत प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं :

- ग्रामीण समुदाय के लिए आय के सतत स्रोत सृजित करने हेतु सिंचाई, वृक्षारोपण, बागवानी, चरागाह विकास, मछली पालन आदि परियोजनाओं के लिए तथा पेयजल आपूर्ति के लिए वर्षा जल की एक–एक बूंद का संग्रह एवं संरक्षण करना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन, गरीबी उन्मूलन, सामुदायिक अधिकार, समानता का अधिकार तथा सामाजिक व आर्थिक संसाधनों का विकास।

बंजर भूमि पर उगाए जा रहे पौधे

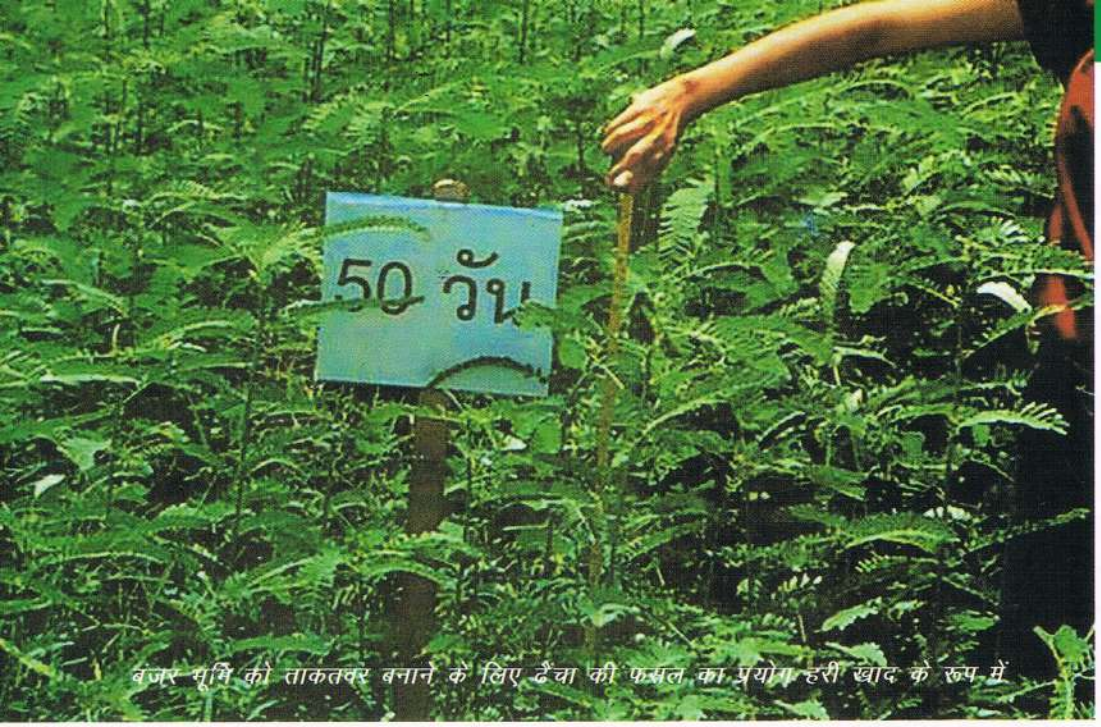

बंजर भूमि को ताकतवर बनाने के लिए ढैंचा की फसल का प्रयोग हरी खाद के रूप में

- ग्रामीण क्षेत्रों के समग्र विकास के लिए फसलों, मानव व पशुधन पर सूखे और मरूस्थलीय जैसी भीषण जलवायु स्थितियों के प्रतिकूल प्रभाव को कम करना।
- प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन तथा आपदा के विपरीत प्रभाव में कमी, प्राकृतिक संसाधनों का विकास।
- सूखे से बचाव हेतु वृक्षारोपण तथा वन संरक्षण।
- बंजर भूमि सुधार परियोजनाओं की उपलब्धियां।
- ऐसे क्षेत्र जहां बंजर भूमि अधिक हो, वहां पर जलागम विकास कार्यक्रम चलाना चाहिए। जलागम वाटरशेड विकास क्षेत्रों के अन्तर्गत फसलों की पैदावार में सन्तोषजनक वृद्धि दर्ज की गई।
- बंजर भूमि सुधार कार्यक्रमों से फसल सघनता में भी बढ़ोतरी हुई। फसल प्रणाली में मूलभूत परिवर्तन हुआ। जिन क्षेत्रों में वर्ष में केवल एक ही फसल ली जा सकती थी वहां पर अब वर्ष में दो फसलें ली जा रही हैं। इसका सीधा सम्बन्ध शुष्क क्षेत्रों में पानी की उपलब्धता बढ़ने से है। कुछ बारानी क्षेत्रों में तो फसलों की उन्नतशील व संकर प्रजातियों को अपनाया जा रहा है।
- शुष्क व बारानी क्षेत्रों में मृदा क्षरण में कमी आई। ग्रामीण क्षेत्र के ऊसर, परती, बंजर एवं कृषि हेतु पूर्णरूप से अनुपयोगी भूमि पर बायो डीजल पेड़–जेट्रोफा व करंज रोपण को प्रोत्साहन दिया गया।
- मृदा एवं जल संरक्षण पद्धतियां अपनाने से भू–जल स्तर बढ़ाने में मदद मिली। बंजर भूमि क्षेत्रों में भूजल स्तर में 0.8 मीटर से 7 मीटर की वृद्धि हुई।
- उपचारित बंजर भूमियों में फसल विविधीकरण (कृषि, वानिकी, बागवानी, पशुपालन) अपनाने से पारिवारिक आय में वृद्धि दर्ज की गई।

जलागम क्षेत्र में बाढ़ की तीव्रता में भी कमी पाई गई। मिट्टी व पानी के संरक्षण उपरान्त वनस्पति विहीन पहाड़ियों व रेतीले टीलों पर ईंधन लकड़ी व चारा उत्पादन हेतु वनस्पति का विकास व निचले क्षेत्रों में बाढ़ से सुरक्षा की जा सकती है।

लवणीय/क्षारीय मृदाओं में धान की पैदावार में 19 से 41 कुन्तल प्रति हे. तक वृद्धि हुई। क्षारीय भूमि सुधार से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अतिरिक्त साधन बढ़े।

क्षारीय भूमि सुधार से भूमि की कीमत, फसल की औसत उपज और फसल सघनता में बढ़ोतरी हुई। क्षारीय भूमि सुधार से परिवारों की आय में भी बढ़ोतरी हुई।

- बंजर भूमि सुधार कार्यक्रमों से भूमि उपयोग में अत्यधिक सुधार हुआ है। इससे शुद्ध बुवाई क्षेत्र, कुल कृषित क्षेत्र और एक बार से अधिक बोये गये क्षेत्र में वृद्धि हुई।
- बंजर भूमि सुधार कार्यक्रमों से पशुओं की संख्या में भी वृद्धि हुई। मुख्यतः सुधरी नस्लों को बढ़ावा मिला। बहुत से राज्यों में मछली पालन व्यवसाय में बढ़ोतरी हुई है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त क्षेत्र ऐसी भूमि का है जो अधिकांश समय पानी भरे रहने के कारण कृषि योग्य बेकार भूमि है। ऐसी भूमि पर तालाबों का निर्माण कराकर मछली पालन को बढ़ावा देकर गरीब परिवारों की आय में इजाफा हुआ।

निष्कर्ष

तेजी से बढ़ते शहरीकरण, औद्योगिकीकरण व आधुनिकीकरण की वजह से खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल दिनोंदिन घटता जा रहा है। भविष्य में इसके बढ़ने की सम्भावना नगण्य है। इस सम्बंध में बंजर भूमियों को सुधार कर खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल बढ़ाने में मदद मिल सकती है। बंजरभूमि में वर्षा जल भरा रहता है जिसके परिणामस्वरूप मच्छरों व अन्य बीमारियों के फैलने की आशंका रहती है। इनके सुधार से इन दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है। बंजर भूमि सुधार ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के लिए एक अनुपम तकनीक है जिसके द्वारा बेहतर खाद्यान्न उत्पादन, अधिक कृषि आय और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अधिक अवसर पैदाकर सामाजिक–आर्थिक उन्नति सुनिश्चित की जा सकती है।

(लेखिका प्राकृतिक विज्ञान की अध्यापिका हैं)
ई–मेल : madhurani@yahoo.com.in

सूरजमुखी की उन्नत खेती

डॉ. वीरेन्द्र कुमार

सूरजमुखी एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है। सूरजमुखी अपने गुणों के कारण सम्पूर्ण भारत के किसानों में लोकप्रिय हो गयी है। उत्तरी भारत में तो सूरजमुखी के अतंर्गत क्षेत्रफल दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। सूरजमुखी को वर्ष में किसी भी समय उगाया जा सकता है। सूरजमुखी के बीजों में 45-50 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता वाला तेल होता है। सूरजमुखी का तेल हृदय रोगियों के लिए वरदान है। इसके तेल का प्रयोग साबुन व सौन्दर्य प्रसाधनों के बनाने में भी किया जाता है। सूरजमुखी की खली में 40-44 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीन पायी जाती है। इसकी खली पशुओं और मुर्गियों के लिए आदर्श आहार है। इस लेख में सूरजमुखी की फसल की खेती से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी दी गई है।

हमारे देश में सूरजमुखी का भविष्य उज्जवल है क्योंकि यह कम अवधि वाली, प्रकाश असंवेदी, सूखा सहन करने वाली और विभिन्न जलवायुवीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फसल है। उत्तरी भारत में तो सूरजमुखी के अतंर्गत क्षेत्रफल दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। सूरजमुखी को वर्ष में किसी भी समय उगाया जा सकता है। सूरजमुखी के बीजों में 45–50 प्रतिशत उच्च गुणबत्ता वाला तेल होता है। सूरजमुखी का तेल हल्के पीले रंग का व अच्छी सुगंध वाला होता है। अन्य खाद्य तेलों की तरह ही सूरजमुखी के तेल

का प्रयोग विभिन्न व्यंजनों के बनाने में किया जाता है। इसका प्रयोग हाइडोजिनेटिड़ तेल बनाने में भी किया जाता है। सूरजमुखी के बीजों से देश में प्रचलित विभिन्न मशीनों द्वारा आसानी से तेल निकाला जा सकता है। सूरजमुखी का तेल लिनोलिक अम्ल का मुख्य स्रोत है जो हृदय से रक्त लाने वाली धमनियों में जमे कोलेस्ट्रोल को धो डालने में मदद करता है। अतः सूरजमुखी का तेल हृदय रोगियों के लिए वरदान है। इसके तेल का प्रयोग साबुन व सौन्दर्य प्रसाधनों के बनाने में भी किया जाता है। सूरजमुखी की खली में 40–44 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीन पायी जाती है। इसकी खली पशुओं और मुर्गियों के लिए आदर्श आहार है। नवीनतम तकनीकी को अपनाकर किसान भाई सूरजमुखी की फसल से अधिकतम उपज प्राप्त कर सकते हैं।

बुवाई का समय

सूरजमुखी की खेती वर्ष में किसी भी समय की जा सकती है। परन्तु सूरजमुखी की फसल से अधिकतम पैदावार लेने के लिए बुवाई का उपयुक्त समय निम्नलिखित है।

जायद: जनवरी से मार्च के प्रथम सप्ताह तक।

खरीफ: जुलाई से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक।

रबी: सितम्बर से अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक।

उत्तरी भारत में सूरजमुखी को जायद ऋतु में लगाने पर अधिक उपज मिलती है क्योंकि इस समय बोयी गयी फसल पर बीमारियों और कीट–पंतगों का कम प्रकोप होता है। साथ ही खरपतवारों की भी कम समस्या आती है। जायद में फसल 90 से 100 दिन में ही पककर तैयार हो जाती है। इस समय फूल आने पर मधुमक्खियां भी प्राकृतिक रूप से अधिक सक्रिय रहती है जो परागण की क्रिया में बहुत मदद करती हैं। इससे पूरे फूल में दाना बन जाता है। जिसके परिणामस्वरूप भरपूर पैदावार व दानों से अधिक तेल प्राप्त होता है। किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि खरीफ में सूरजमुखी की बुवाई जुलाई से पहले न करे अन्यथा अगस्त के अन्त में हेड़ बनने के समय भारी वर्षा से फसल के गिरने की सम्भावना रहती है।

मिट्टी का चुनाव

सूरजमुखी की खेती सभी प्रकार की मिट्टियों में की जा सकती है। परन्तु यह अधिक उपजाऊ और पर्याप्त जल निकास की सुविधा वाली मृदाओं में भरपूर उपज देती है। खेत में पानी ठहरने से पौधे रोग ग्रस्त हो सकते हैं। साथ ही उनके गिरने की भी सम्भावना बनी रहती है। सूरजमुखी में लवणीय व क्षारीय रोधिता भी पर्याप्त मात्रा में पायी जाती है। अतः इसे अल्प से मध्यम लवणीय व क्षारीय भूमि में भी उगाया जा सकता है।

उन्नतशील प्रजातियां

सूरजमुखी की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उन्नतशील और नवीनतम किस्मों का चयन अति आवश्यक है। आजकल सूरजमुखी की अधिक उपज देने वाली बहुत सी संकर किस्में उपलब्ध है जो किसानों में अत्यधिक लोकप्रिय होती जा रही हैं। सूरजमुखी की संकर प्रजातियों में बी.एच.एस–1, के.बी.एस.एच–1, एम.एस. एफ.एच–8, आर.एस.एच–3, एल.डी.एम, एम.एस.एफ.एच. –17, पारस, दिव्यामुखी, अरूण, ज्वालीमुखी, व एन. एस.एफ.ए–36 प्रमुख है। इसके अलावा सूरजमुखी की उन्नतशील किस्म 'मार्डेन' बहुत लोकप्रिय है।

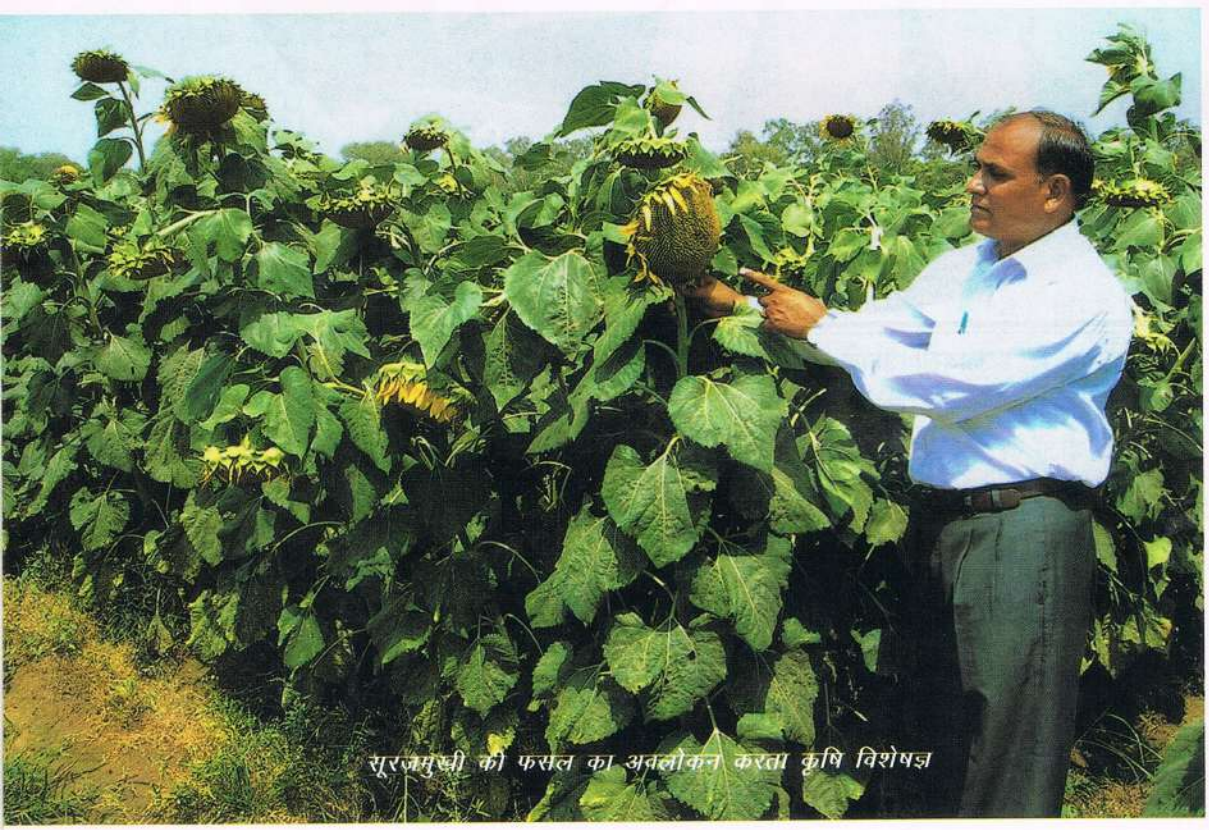

सूरजमुखी की फसल का अवलोकन करता कृषि विशेषज्ञ

फसल चक्र

उचित फसल चक्र अपनाकर सूरजमुखी की फसल को विभिन्न रोगों व कीटों से बचाया जा सकता

है। साथ ही भूमि, जल व अन्य फार्म स्रोतों का भी उचित उपयोग होता है। सूरजमुखी की फसल को एक ही खेत में बार–बार नहीं बोना चाहिए। जहां तक हो सके इसे दलहनी फसल के बाद लें ताकि फसल पुनरावृत्ति कम से कम तीन वर्ष बाद हो। कुछ मुख्य फसल चक्र जैसे मक्का–सूरजमुखी, ग्रीष्मकालीन मूंग–सूरजमुखी व मक्का–तोरिया–गन्ना–गन्ना पेड़ी–सूरजमुखी देश के विभिन्न भागों में काफी प्रचलित है।

दाना बनने की अवस्था पर सूरजमुखी का पूर्ण विकसित हेंड

भूमि की तैयारी

सूरजमुखी की फसल से अधिक पैदावार लेने हेतु प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की पर्याप्त संख्या होनी चाहिए। यह तभी सम्भव है जब बीजों का अकुंरण अच्छा हुआ हो। खेत में प्रति इकाई क्षेत्र आवश्यकता से कम पौधे होने पर उपज में भारी कमी आ जाती है। अतः बीजों के अच्छे जमाव और पौधों की उचित वृद्धि व विकास के लिए खेत की अच्छी तरह से तैयारी करना अति आवश्यक है। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इससे बीजों का जमाव शीघ्र व अच्छा होता है।

बीज की मात्रा एवं बुवाई की विधि

सूरजमुखी की सामान्य किस्मों का 10–12 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। जबकि संकर किस्मों की बुवाई के लिए 8–10 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर आवश्यक होता है। संकर किस्मों के प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करना चाहिए। किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि वे स्वयं का उत्पादित बीज बुवाई हेतु प्रयोग न करे। सामान्यतः सूरजमुखी की बुवाई दो विधियों से की जाती है।

समतल भूमि में बुवाई– सूरजमुखी की बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए। देशी हल की सहायता से कूंड बनाकर पीछे–पीछे हाथ से बीज गिराये। बीज की बुवाई भुरभुरी मिट्टी में करनी चाहिए। किसान भाई ध्यान रखें कि बुवाई करते समय बीज समान रूप से पड़ें। बीज डालने के बाद खुले कूंड को पाटा चलाकर अवश्य ठीक कर दें। सिंचित अवस्था में बीज 3–5 से.मी. की गहराई पर डाले। कम अवधि वाली किस्मों में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20 से.मी. रखनी चाहिए। जबकि संकर किस्मों के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50–60 से.मी. तथा पंक्तियों में पौधे से पौधे की दूरी 25–30 से.मी. रखनी चाहिए। समतल भूमि में सूरजमुखी की बुवाई सीडड्रिल से भी की जा सकती है।

मेड़ों पर बुवाई– जिन क्षेत्रों में जल भराव की समस्या रहती है, वहां पर सूरजमुखी की बुवाई 60 से.मी. की दूरी पर बनी मेड़ों पर की जाती है। नालियों के ऊपर 30 से.मी. की दूरी पर प्रति छिद्र 2 बीज बोये जाते हैं। इस विधि से बुवाई के तुरन्त बाद नालियों में हल्की सिंचाई करने पर बीजों का अकुंरण जल्दी व एक समान रूप से होता है। यह विधि सूरजमुखी की पछेती बुवाई के लिए उपयुक्त है।

बीज उपचार

बीज के अच्छे जमाव के लिए बुवाई से पूर्व बीज को 10–12 घंटे पानी में भिगों लें। इसके बाद कैप्टान या थीरम नामक कवकनाशी की 2.5 ग्राम मात्रा को प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से अच्छी तरह से मिला लें। ऐसा करने से बीज जनित बीमारियों पर काबू पा सकते हैं। परिणामस्वरूप प्रति इकाई क्षेत्र स्वस्थ पौधों की पर्याप्त संख्या प्राप्त होती है। यदि बीज किसी विश्वसनीय संस्था से खरीदा गया है तो किसान भाइयों को उसे उपचारित करने की आवश्यकता नहीं है। फसल से भरपूर पैदावार के लिए व खेती में लागत कम करने के लिए बीज को कवकनाशी से उपचारित करने के बाद ऐजोटो बैक्टर व पी.एस.बी नामक

जीवाणु उर्वरकों से उपचारित करना भी लाभदायक होता है। ये जीवाणु उर्वरक कृषि सेवा केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि शोध संस्थाओं से आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं।

खाद एवं उर्वरकों की संतुलित मात्रा

खाद एवं उर्वरकों की मात्रा फसल चक्र में उगाई जाने वाली फसलों व मृदा में उनके स्तर पर निर्भर करती है। खेत की मिट्टी की जांच के बाद ही खाद एवं उर्वरकों की मात्रा सुनिश्चित करें। सूरजमुखी की अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए गोबर या कम्पोस्ट खाद उपलब्ध होने पर प्रति हेक्टेयर 5–8 टन खाद खेत तैयार करने से 10–12 दिन पहले मिट्टी में अच्छी तरह मिला

सूरजमुखी का परिपक्व हेड व फूल

देनी चाहिए। जिससे पौधों को नाइट्रोजन और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व अधिक समय तक उपलब्ध होते रहते हैं। यदि किसान भाई मिट्टी की जांच न करवा सके तो 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। जिसमें से आधी नाइट्रोजन खड़ी फसल में प्रथम सिंचाई के बाद देनी चाहिए। फास्फोरस के लिए सिंगल सुपर फास्फेट (एस.एस.पी.) का प्रयोग करें जिससे सल्फर की भी उचित मात्रा फसल को उपलब्ध हो सके। यदि एस.एस.पी. उपलब्ध न हो तो किसी अन्य स्रोत से 25–30 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हेक्टेयर बुवाई से पहले प्रयोग करना चाहिए। सूरजमुखी की फसल में रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक उर्वरकों का भी प्रयोग किया जा सकता है। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से सूरजमुखी की पैदावार में 15–20 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी है। सूरजमुखी के लिए उपयुक्त जीवाणु उर्वरकों में एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम, बैसीलस स्पीसीज, व माइकोराइजा प्रमुख है। जीवाणु उर्वरक सस्ते व इनका प्रयोग भी सुगम है तथा ये आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। जैविक उर्वरकों के 200 ग्राम के दो पैकेट एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए पर्याप्त होते हैं। इससे भूमि की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने में भी मदद मिलती है। किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि यदि वे गोबर व कम्पोस्ट खाद या जैविक उर्वरकों का प्रयोग कर रहे हैं तो नाइट्रोजन की मात्रा सिफारिश की गई मात्रा से 25–30 कि.ग्रा. कम कर दें।

सिंचाई प्रबन्धन

सूरजमुखी की खेती सामान्यतः सिंचित क्षेत्रों में ही सम्भव है। जहां सिंचाई का पूरा प्रबन्ध हो। फसल की सभी संवेदनशील अवस्थाओं पर सिंचाई करना आवश्यक है। फरवरी में बोई गयी फसल में तीन सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है। सूरजमुखी की फसल में पहली सिंचाई बुवाई के 35–40 दिनों बाद करनी चाहिए। दूसरी सिंचाई फूल आने के समय (55–60 दिनों बाद) व तीसरी सिंचाई बुवाई के 70–80 दिनों बाद बीज बनने के समय करनी चाहिए। इस अवस्था में पानी की कमी होने पर बीज कम बनते हैं। अन्ततः पैदावार में भारी कमी आ जाती है। खेत में किसी भी दशा में पानी न खड़ा रहने दें। अन्यथा फसल के गिरने का खतरा बना रहता है। किसान भाई ध्यान रखें कि खरीफ की फसल में सामान्यतः सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है।

विरलीकरण

सूरजमुखी की फसल में पौधों का विरलीकरण अति आवश्यक है क्योंकि प्रति इकाई क्षेत्र में वांछित पौध संख्या न होने के कारण

उत्पादन में कमी आ जाती है। फसल की बुवाई के समय पंक्ति से पंक्ति का अन्तर तो निश्चित होता है परन्तु पौधे से पौधे का फासला अनिश्चित रहता है। सामान्यतः बुवाई के 15–20 दिनों बाद पौध विरलन का कार्य किया जाता है। इसमें पौधे से पौधे का अन्तर 25–30 से.मी. रखते हुए कमजोर व असामान्य पौधों को निकाल दिया जाता है। फसल में आवश्यकता से अधिक पौधों को निकाल देने से रोगों की उग्रता में भी कमी आ जाती है। संकर तथा अन्य अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्मों के औसत पौधों की सख्या 55–65 हजार प्रति हेक्टेयर रखनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

सूरजमुखी की फसल को खरपतवारों से मुक्त रखने के लिए बुवाई के 20–25 दिन बाद निराई–गुड़ाई करना अत्यन्त आवश्यक है। फसल की वृद्धि के साथ ही कई प्रकार के चौड़ी व संकरी पत्तियों वाले खरपतवार उग आते हैं जो फसल को दिये गये पोषक तत्वों और पानी का अवशोषण कर लेते हैं जिससे तेल की गुणवत्ता और पैदावार में कमी आ जाती है। इस प्रकार किसान को अपनी फसल का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता है। आजकल मजदूरों की कम उपलब्धता और उनकी अधिक मजदूरी के कारण खरपतवारों को नियंत्रण करने के लिए बहुत से शाकनाशी बाजार में उपलब्ध हैं। इसके लिए बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पहले पेन्डीमिथेलिन नामक शाकनाशी की 750 ग्राम सक्रिय तत्व को प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में छिड़काव करके खरपतवारों को नियंत्रण कर सकते हैं।

कीट एवं उनका नियंत्रण

सूरजमुखी में एफिड और जैसिड पत्तियों का रस चूसने वाले कीटों का प्रकोप होता है। ये छोटे कोमल शरीर वाले हरे रंग के कीट पत्तियों व पौधे के अन्य कोमल भागों पर समूह में चिपके रहते हैं तथा रस चूसकर फसल को कमजोर कर देते हैं। एफिड का प्रकोप यदि अधिक हो तभी कीटनाशी का प्रयोग करें अन्यथा एफिड का मित्र कीटों द्वारा स्वयं जैविक नियंत्रण हो जाता है। उपयुक्त कीटों के अधिक प्रकोप होने पर मेटासिस्टाक्स (25 ई. सी.) 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव कर दें। एक हेक्टेयर क्षेत्र में स्प्रे के लिए 600–700 लीटर पानी पर्याप्त होता है। इसके अलावा बिहार बाल वाली झल्ली भी पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है। बिहार वाली झल्ली से प्रभावित पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर दें।

रोग एवं उनका निदान

सूरजमुखी की फसल में लगने वाले प्रमुख रोगों में आल्टरनेरिया ब्लाइट, रस्ट, रोमिल फफूंद, स्कलेरोटिनिया स्टाक रोट, राइजोपस हेडराट, पाउडरी मिल्डयू तथा वर्टो सीलियम विल्ट है। इन सब रोगों से बचाव के लिए प्रमाणित बीज किसी विश्वसनीय संस्था से लेना चाहिए। फसल की रोग–रोधी किस्मों का चुनाव करना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीज को उचित कवकनाशियों जैसे बाविस्टीन व थाइरम (2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करना चाहिए। उत्तरी भारत में जायद की फसल में रोगों का प्रकोप नहीं के बराबर होता है। किन्तु खरीफ के मौसम में बीमारी लगने की सम्भावना रहती है। स्कलेरोटिनिया रोट से फसल को बचाने हेतु डाइथेन एम–45 का 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी) का छिड़काव किया जा सकता है।

कटाई

अधिक उपज देने वाली संकर किस्मों की कटाई का उपयुक्त समय जब फूल का पिछला हिस्सा पीले रंग का हो जाये। सामान्यतः सूरजमुखी की फसल 90 से 100 दिन में पककर तैयार हो जाती है। पौधों से फूलों को काटकर खलिहान में 3–4 दिन सूखने के लिए छोड़ दें। इसके बाद डंडों से पीटकर बीजों को बाहर निकाल लें। भंडारण करने से पूर्व बीजों को अच्छी तरह धूप में सूखा लें जिससे नमी 9–10 प्रतिशत से अधिक न रहे।

उपज

फसल की उचित देखरेख व समय से उन्नत सस्य विधियां अपनाई जाएं तो सूरजमुखी की संकर किस्मों से 18–22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज मिल सकती है।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के सस्य विज्ञान संभाग में तकनीकी अधिकारी हैं।)

ई–मेल : v.k.agro@yahoo.co.in

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले।

आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की ब्यार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। हमारा पता है – वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110001

आप हमें लेख ई–मेल भी कर सकते हैं।

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

रेशेदार भोजन खाइये-अच्छा स्वास्थ्य पाइये

डॉ. राज किशोर

प्रायः लोगों की यह धारणा होती है कि जब भोज्य पदार्थों के रेशेदार भाग का पाचन होता ही नहीं है तो हमारे शरीर के लिए उनका क्या उपयोग हो सकता है। परन्तु विभिन्न वैज्ञानिक शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि रेशेदार पदार्थों की भी शरीर में उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि अन्य पोषक पदार्थों की। भोजन में मौजूद रेशेदार पदार्थ शरीर की पाचन शक्ति को मजबूत करने के साथ-साथ शरीर के विभिन्न अंगों को मजबूती भी प्रदान करते हैं।

हम जो भी भोजन ग्रहण करते हैं उसका मुख्य उद्देश्य शरीर की वृद्धि तथा रोग-व्याधियों से शरीर की रक्षा के लिए आवश्यक पोषक पदार्थ, प्रोटीन, खनिज तथा विटामिन आदि प्राप्त करना होता है। लेकिन भोजन के विषय में हमारी यह सोच पूरी तरह से उचित प्रतीत नहीं होती है। नित्य-प्रति किए जाने वाले भोजन में उपरोक्त विशेषताओं के साथ-साथ उसमें पर्याप्त मात्रा में रेशेदार खाद्य पदार्थों का होना शारीरिक क्रियाओं के सुचारू ढंग से चालन के लिए अति आवश्यक है। यद्यपि हमारे द्वारा नित्य-प्रति ग्रहण किए जाने वाले भोजन में मौजूद रेशेदार पदार्थ अपाच्य होते हैं लेकिन ये भोजन को पचाने तथा अपाच्य पदार्थों को मल के रूप में शरीर से बाहर निकालने के लिए अति आवश्यक होते हैं।

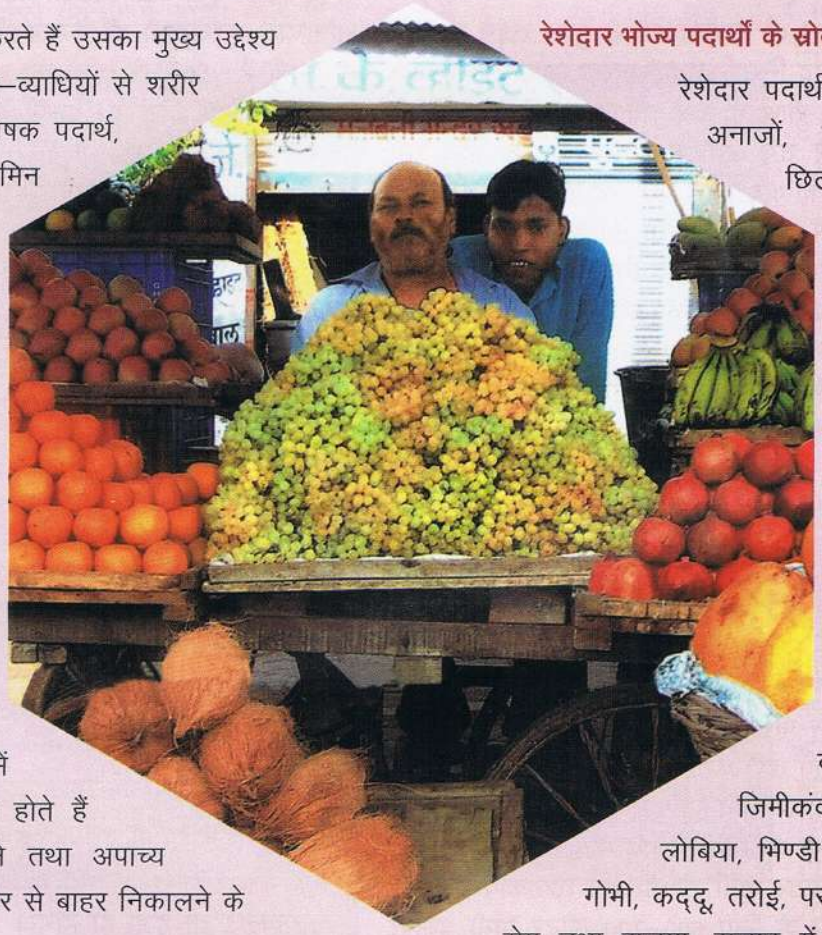

प्रायः लोगों की यह धारणा होती है कि जब भोज्य पदार्थों के रेशेदार भाग का पाचन होता ही नहीं है तो हमारे शरीर के लिए उनका क्या उपयोग हो सकता है। परन्तु विभिन्न वैज्ञानिक शोधों से यह प्रमाणित हो चुका है कि रेशेदार पदार्थों की भी शरीर में उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि अन्य पोषक पदार्थों की। भोजन में मौजूद रेशेदार पदार्थ शरीर की पाचन शक्ति को मजबूत करने के साथ-साथ शरीर के विभिन्न अंगों को मजबूती भी प्रदान करते हैं।

रेशेदार भोज्य पदार्थों के स्रोत

रेशेदार पदार्थ मुख्य रूप से अंकुरित अनाजों, दलिया, साबुत तथा छिलके वाली दालों और चोकर युक्त आटे में अधिकता से विद्यमान होते हैं। अनाजों में मक्का, ज्वार, बाजरा तथा चना (छिलके सहित) में भरपूर रेशेदार पदार्थ होते हैं। सब्जियों में हरे पत्तेदार साग जैसे पालक, सोया, मेथी, कुल्फा, चौलाई तथा मूली का साग, मटर, कटहल, अरूवी, बंडा, जिमीकंद, करेला, सहजन, लोबिया, भिण्डी (ओकरा), टिण्डा, गांठ गोभी, कद्दू, तरोई, परवल, विभिन्न प्रकार की सेम तथा राजमा, सलाद में गाजर, चुकंदर, मूली, सिलेरी, पार्सले, लेट्यूस, ब्रोकली, पुदीना, हरी धनिया, अदरक तथा फल जैसे अमरूद, आलूबुखारा, कमरख, फालसा, परियाला, बेर, आम, शरीफा, बेल, सेब, संतरा, पपीता, अनानास, नाशपाती एवं रसभरी आदि में भरपूर रेशेदार पदार्थ विद्यमान रहते हैं। दैनिक भोजन के लिए मसालों के रूप में उपयोग में आने वाली अनेक वस्तुएं जैसे लहसुन, प्याज, लौंग, इलायची (छोटी तथा बड़ी), सौंफ, सूखी धनिया, काली मिर्च, जीरा आदि में भी रेशेदार पदार्थ भरपूर मात्रा में विद्यमान रहते हैं। हमारे दैनिक उपयोग में

आने वाले सभी प्रकार के अनाजों तथा दालों में लगभग 2–3 प्रतिशत तथा हरी सब्जियों और फलों में लगभग 3–4 प्रतिशत तक रेशेदार पदार्थ उपस्थित रहते हैं। संतुलित भोजन की दृष्टि से दैनिक आहार में हमें प्रतिदिन 300–400 ग्राम मात्रा में रेशेदार पदार्थों को शामिल करना चाहिए।

भूजा

रेशेदार पदार्थ क्यों आवश्यक हैं

हमारे द्वारा प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले भोजन एवं नाश्ते में उपस्थित रेशेदार पदार्थों को हम अपाच्य भोजन भी कह सकते हैं। इन पदार्थों का शरीर में न तो पाचन होता है और न ही अवशोषण, चाहे इन्हें कितना ही पकाया जाए। लेकिन यहां यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भोज्य पदार्थों को आवश्यकता से अधिक पकाने से उनमें मौजूद रेशेदार पदार्थ बेकार हो जाते हैं। ये आंतों की मांसपेशियों को क्रियाशील रखने एवं उन्हें संकुचन और प्रसारण के लिए आवश्यक शक्ति तथा गति प्रदान करने का कार्य करते हैं। रेशेदार पदार्थों के अभाव में हमारी आंतों के मल–चालन की क्रिया भली–भांति नहीं हो पाती है जिनके कारण मल–विसर्जन पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है और मल बड़ी आंतों में चिपका रह जाता है। बिना रेशेदार भोजन आंतों में देर तक रूका रहता है जिसके कारण इसका अधिक अंश शरीर में अवशोषित होता है जिसके फलस्वरूप कब्ज (कोष्ठबद्धता), मोटापा, पथरी, अपेंडिसाइटिस, आंतों का कैंसर तथा हृदय रोग आदि होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। दैनिक भोजन में इन अपाच्य पदार्थों की कमी का सीधा संबंध नाना प्रकार के रोगों से है। ये रक्त को अधिक अम्लतापूर्ण होने से भी बचाते हैं। रेशेदार पदार्थ शरीर में कोलेस्ट्रोल की मात्रा

ब्रोकली

पार्सले

को नियंत्रित रखते हैं और हृदय को कोलेस्ट्राल जनित रोगों से बचाते हैं। रेशेदार पदार्थ एथलीट्स के लिए आवश्यक होते हैं क्योंकि ये उनमें शारीरिक स्फूर्ति को बनाए रखने में मददगार साबित होते हैं। रेशेदार पदार्थों की कमी से होने वाले रोग प्रायः गांवों की अपेक्षा शहरों में अधिक देखने को मिलते हैं। शहरों में लोग आटे से चोकर निकालकर या चोकररहित मिल का आटा प्रयोग में लाते हैं तथा सब्जियों और अनेक फलों का छिलका अनावश्यक रूप से उतार कर उनका उपयोग करते हैं। रेशेदार पदार्थों को शरीर के भीतर अपना काम अच्छी तरह से करने के लिए भरपूर पानी की आवश्यकता होती है। अतः प्रतिदिन भरपूर मात्रा में (लगभग 8–10 गिलास) पानी चाहिए।

अन्य खाद्य पदार्थों के साथ–साथ भोजन या नाश्ते के रूप में रेशेदार पदार्थ प्राप्त करने का सबसे अच्छा स्रोत कार्नफ्लेक्स तथा भुने हुए अनाज हैं। इन्हें आम बोलचाल की भाषा में 'भूजा' कहते हैं। भूजा बनाने के लिए भुजिया चावल, चना, मक्का, ज्वार एवं बाजरा आदि अनाजों का उपयोग कर सकते हैं। भूजा के अलावा चूरा एवं दीपावली के समय मिलने वाला धान का लावा भी रेशेदार पदार्थों के अच्छे स्रोत हैं। इन्हें अपने प्रतिदिन की आहार आदतों में शामिल कर हम अपने शरीर के लिए आवश्यक रेशेदार पदार्थों की आवश्यक मात्रा आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। गर्मियों में चना और जौ से बने हुए 'सत्तू' को भी अपने आहार में शामिल कर हम पर्याप्त मात्रा में रेशेदार पदार्थ प्राप्त कर सकते हैं और साथ ही साथ तपती गर्मी में लू से अपना बचाव भी कर सकते हैं। भूजा, चूरा और सत्तू खाने की आदत डालकर हम बेहतर स्वास्थ्य प्राप्त करने के साथ–साथ अनेक लोगों को रोजगार भी प्रदान कर सकते हैं।

आइये! हम अपने दैनिक भोजन की आदतों एवं अपने भोजन में सुधार लाएं और अपने नित्य–प्रति के भोजन में रेशेदार पदार्थों का उपयोग बढ़ाकर अच्छे स्वास्थ्य की ओर बढ़ें।

(लेखक स्वतंत्र विज्ञान पत्रकार हैं)
ई–मेल : rajkishore1952@rediffmail.com

"हमें ग्रामीण क्षेत्रों में अपने प्रोग्राम लागू करने के लिए खासतौर पर अपनी प्रशासनिक व्यवस्था को मजबूत बनाना होगा। जो लोग गांवों और कस्बों में रहते हैं उन्हें भी उसी तरह की सुविधाएं प्राप्त होनी चाहिए जो शहरी इलाकों में रहने वाले लोगों को मिलती हैं। इस काम में हमें कम्युनिकेशन और इनफॉरमेशन टेक्नोलॉजी से बहुत मदद मिल सकती है। हमने हाल ही में यूनिक आइडेनटिफिकेशन अथॉरिटी ऑफ इंडिया की स्थापना की है। यह समूचे देश को अच्छी शासन व्यवस्था से जोड़ने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है। हमें उम्मीद है कि अगले एक–डेढ़ साल में पहचान–नंबरों का पहला सेट तैयार हो जाएगा।"

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह

गया जिले में बदलाव की बयार

प्रवीण कुमार पाठक

बिहार के गया जिले के किसानों के जीवन में आशा की नई किरण दिखाई दी है। आज इस जिले के किसान श्रीविधि धान, एस.डब्ल्यू.आई. विधि से गेहूं की खेती करते हैं तथा अपने खेतों में वर्मी कम्पोस्ट का इस्तेमाल खाद की जगह पर करते हैं। *'प्रदान'* कार्यकताओं की कड़ी मेहनत के चलते यहां गरीब परिवारों के रहन-सहन में बदलाव आया है।

बिहार राज्य के नक्सल प्रभावित गया जिले के बोधगया, डोभी, शेरघाटी, खिजरसराय एवं बाराचट्टी प्रखण्डों के ग्रामीण क्षेत्रों में बिहार जीविका के सहयोग से (प्रोफेशनल असिसटेंन्स फोर डेवलपमेन्ट एक्शन) ग्रामीण जीविकोपार्जन परियोजना के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे गरीब किसानों एवं बिहार ग्रामीण जीविकोपार्जन परियोजना जीविका द्वारा गठित स्वयं सहायता समूहों के सदस्यों को श्रीविधि (सिस्टम ऑफ राइस इन्टेन्सीफिकेशन) धान एवं एस.डब्ल्यू.आई. (सिस्टम ऑफ व्हीट इंटेंसीफिकेशन) विधि से गेहूं उगाने एवं वर्मी कम्पोस्ट तथा हरा खाद बनाने की तकनीक सिखाकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का कार्य युद्धस्तर पर किया जा रहा है। जीविका परियोजना विश्व बैंक और बिहार सरकार द्वारा संपोषित है। जिन गांवों में पानी की समस्या है वहां पर पानी संरक्षण व्यवस्था का कार्य किया गया है।

जीविका समूह की बरती देवी श्री विधि से उगाई गई धान के एक मुरहा (हील) के साथ

प्रदान द्वारा यह कार्य जून 2007 में शुरू किया गया था। शुरुआती दौर में ***प्रदान*** के कार्यकर्ताओं को इस कार्य को अंजाम देने में गांव में काफी कठिनाईयों का सामना करना पड़ा था। मगर ***प्रदान*** के कार्यकर्ता धैर्य रखते हुए अपने कार्य को अंजाम देने में सफल रहे जो काबिलेतारिफ है। गया जिले में सिंचाई व्यवस्था का घोर अभाव है। यहां के किसान वर्षा पर निर्भर हैं। गरीब किसान भाइयों के पास इतनी पूंजी नहीं है कि वे अपने खेतों में सिंचाई के लिए बोरवेल लगवा सकें क्योंकि यहां का जलस्तर काफी नीचे है। एक बोरवेल करवाने में 50,000 रुपये से 90,000 रुपये तक की लागत आती है। ***प्रदान*** के कार्यकर्ता इन प्रखण्डों के ग्रामीण क्षेत्रों में रह कर गरीब किसान भाइयों को प्रशिक्षित कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का कार्य कर रहे हैं। ***प्रदान*** के कार्यकर्ता अपने कार्य को अंजाम देने के लिए गांव स्तर पर चयन कर उन्हें प्रशिक्षित करके गांवों में खेती का कार्य करवाते हैं।

प्रदान ने जून 2007 में बोधगया प्रखण्ड के 102 किसानों के खेतों में श्रीविधि धान की फसल लगाई थी जिसमें शेखवारा गांव के जीविका समूह की सदस्या बरती देवी ने श्रीविधि से 6 मन 32 किलोग्राम प्रतिकट्टे की दर से धान का उत्पादन कर गया जिले में कीर्तिमान स्थापित किया है। वैसे तो उन सभी किसानों का 3

भूसिया, गया में मगध प्रमण्डल गया के आयुक्त श्री विधि लाभुक परिवारों से श्री विधि से प्राप्त उपज की जानकारी लेते हुए

से 4 मन प्रतिकट्टे की दर से धान का उत्पादन हुआ था जिन्होंने श्रीविधि धान की फसल लगाई थी।

वर्ष 2008 में गया जिले के बोधगया, कोमी, शेरघाटी एवं खिजरसराय प्रखण्डों के 4146 किसानों के खेतों में श्रीविधि धान की फसल लगायी गई थी जिसमें डोभी प्रखण्ड के कोसवा गांव के किसान पिन्टू कुमार ने 7 मन प्रतिकट्टे की दर से धान का उत्पादन किया था। वर्ष 2008 में इस विधि से गेहूं की खेती बोधगया में 80 किसानों के साथ की गई जिसमें बोधगया प्रखण्ड के शेखवारा गांव के जीविका समूह की माला देवी ने 3 मन प्रतिकट्टा गेहूं का उत्पादन कर गया जिले में कीर्तिमान स्थापित किया है। बोधगया प्रखण्ड के 130 किसानों को वर्मी कम्पोस्ट बनाने का प्रशिक्षण देकर वर्मी कम्पोस्ट इनके द्वारा तैयार किया गया। इसी तरह 2008 में बोधगया के कुछ गांवों में पानी की समस्या का ***प्रदान*** द्वारा हल निकाला गया।

प्रदान के कार्यकर्ताओं के द्वारा दो साल की कड़ी मेहनत के चलते आज इन प्रखण्डों के ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे गरीब परिवारों के रहन–सहन में बदलाव आया है। आज यहां के हरेक किसान श्रीविधि धान, एस.डब्ल्यू.आई. विधि से गेहूं तथा अपने खेतों में वर्मी कम्पोस्ट का इस्तेमाल खाद की जगह पर करते हैं। जिस जमीन पर इन किसानों को परम्परागत विधि से धान का उत्पादन 1 मन से 2 मन प्रतिकट्टे होता था, आज उसी जमीन पर श्री विधि के द्वारा 4 से 6 मन प्रति कट्टे की दर से उत्पादन हो रहा है। वहीं पर परम्परागत विधि से एक मन प्रति कट्टे की दर से गेहूं का उत्पादन होता था आज उसी जमीन पर एस. डब्ल्यू.आई. विधि से 2 से 3 मन प्रति कट्टा गेहूं का उत्पादन हो रहा है जिससे यहां के किसान भाईयों के जीवन में हरियाली आयी है। इस कार्य को करने में ***प्रदान*** की टीम ने कड़ी मेहनत की है।

प्रदान के द्वारा सन् 2009 में 20,000 किसानों के साथ श्री विधि धान की खेती 10,000 एकड़ में एवं एस.डब्ल्यू.आई. गेहूं की खेती 5000 किसानों के साथ 250 एकड़ में तथा 1000 किसानों को वर्मी कम्पोस्ट बनाने का प्रशिक्षण देने का लक्ष्य निर्धारित किया है।

प्रदान के द्वारा कृषि क्षेत्र में किए गए कार्य की जिला प्रशासन के अधिकारियों ने एवं राज्य सरकार के कृषि वैज्ञानिकों ने प्रशंसा की है तथा राज्य सरकार ने ***प्रदान*** के कार्यकर्ताओं को पुरस्कार भी ***प्रदान*** किया। राज्य सरकार के कृषि विभाग के अधिकारियों ने इस विधि से धान एवं गेहूं की खेती को अन्य जिलों में शुरू करने की योजना बनायी है।

गया जिले के किसान, जिन्होंने इस विधि के द्वारा अपने खेत में धान एवं गेहूं की फसल लगायी, उन किसानों के घर में पहले से ज्यादा खुशहाली आयी है तथा इनके घरों में साल भर खाने के लिए अनाज उपलब्ध रहता है। ***प्रदान*** द्वारा यह कार्य जून 2007 में बोधगया प्रखण्ड के झिकटीया एवं शेखवारा पंचायत में शुरू किया गया था। उस समय इस पंचायत के किसानों को जब बतलाया जाता था कि इस विधि से धान एवं गेहूं की खेती करने पर तीन से चार गुना उत्पादन होता है तथा पानी की भी कम जरूरत पड़ती है तब वहां के किसान विश्वास नहीं करते थे तथा किसान भाई आश्चर्य करते थे। लेकिन जब इस विधि से 4 से 6 गुना फसल का उत्पादन हुआ तो उन्हें विश्वास हुआ। तब जाकर अन्य किसान भी इस विधि को अपनाने लगे।

एक तरफ जहां जीविका परियोजना के द्वारा गरीब लोगों को स्वयंसहायता समूह के माध्यम से वित्तीय जरूरतों को पूरा किया जा रहा है वहीं दूसरी तरफ ***प्रदान*** के द्वारा स्वयंसहायता समूह के सदस्यों के खेतों मे श्रीविधि से धान एवं एस.डब्ल्यू.आई. विधि से गेहूं की खेती तथा वर्मी कम्पोस्ट द्वारा इनके जीविकोपार्जन का कार्य जीविका परियोजना एवं ***प्रदान*** के कार्यकर्ताओं द्वारा किया जा रहा है।

श्रीविधि से धान उगाने के लाभ

- 40 से 60 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है।
- बीज की बचत होती है। डेढ़ किलोग्राम बीज एक बीघा के लिए लगता है जबकि पारम्परिक विधि से एक मन तक प्रति बीघा बीज बोया जाता है।
- इसमें बड़े–बड़े बाल निकलते हैं। यह सब अधिक दूरी पर रोपने के कारण होता है। इसमें कन्नी अधिक निकलती है।
- पौधे के स्वस्थ होने के कारण इसमें रोग एवं कीड़े का प्रकोप कम होता है।
- आंधी–पानी के कारण यह कम गिरता है क्योंकि जड़ एवं तने काफी मजबूत होते हैं।
- यह लगभग 10 दिन पहले तैयार हो जाता है।
- यदि किसान इसके सभी 6 सिद्धान्तों का प्रतिपालन करता है तो धान की उपज 100 मन प्रति बीघा प्राप्त कर सकता है।

श्री विधि से धान उगाने हेतु 6 मूल सिद्धांत

- 8 से 12 दिनों के बीहन की रोपाई करना ताकि उसकी प्रजनन क्षमता को बरकरार रखा जा सके।
- एक–एक बीहन को सावधानीपूर्वक धीरे से खुरपी या चपड़ा के सहारे निकाल कर मुख्य क्यारी में लगाना। इसे सहजता से मिट्टी के साथ ही बिना नुकसान पहुंचाये लगाना।

बाराचट्टी प्रखण्ड, गया अंतर्गत अंजनीयां टांड़ गांव के किसान श्री विधि से उगाई गई फसल का एक मुड़हा (हील) धान दिखाते हुए।

- पौधे से पौधे की दूरी कम से कम 10 इंच एवं इतनी ही दूरी कतार से कतार की भी होनी चाहिए।
- हस्तचालित घास निकालने वाली मशीन का उपयोग करना ताकि घास भी निकले एवं मिट्टी भी हल्की होकर फसल की जड़ को समुचित हवा प्रदान कर सके।
- मिट्टी को हमेशा भिगोकर रखें पर कभी भी भरा हुआ पानी नहीं रखे। पानी डालकर निकाल दे। आधा इंच से एक इंच तक ही खेतों में पानी रखे।
- मिट्टी की उर्वरता को बनाये रखने के लिए जैविक खाद का प्रयोग करें।

सिस्टम ऑफ़ व्हीट इंटेंसीफिकेशन विधि के नियम एवं शर्तें

एस.डब्ल्यू.आई. गेहूं की खेती करने के तरीकों का नाम है। इस विधि के अन्तर्गत किसानों को प्रति एकड़ सिर्फ 13.5 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है जबकि सामान्य विधि में प्रति एकड़ 54 से 81 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। गेहूं बुवाई करने का सही समय 5 नवम्बर से 15 नवम्बर तक है।

बीज शोधन एवं उपचार

- इसके अन्तर्गत 1 एकड़ खेत में गेहूं की बुवाई हेतु 13.5 किलोग्राम उन्नत बीज लें।
- 27 लीटर पानी लेकर 60 डिग्री सेल्सियस के बराबर गरम करे। पानी मिट्टी के बर्तन में या हड़िया में ले। किसी धातु के बर्तन का इस्तेमाल ना करे।
- 13.5 किग्रा. गेहूं के बीज को गुनगुने पानी में डाल दें और उसे हाथ से अच्छी प्रकार से मिला दे। जो बीज ऊपर आता है उसे हाथ से छान कर फेंक दें।
- गरम पानी सहित बीज के बर्तन में 5.5 लीटर गौ–मूत्र, 3 किग्रा. केंचुआ खाद एवं 1.5 किग्रा. गुड़ (मीठा) को डालकर ठीक से मिला दें। इसी अवस्था में 8–10 घंटे तक बीज को उसी बर्तन में सभी सामग्री के साथ रहने दें।
- 8–10 घंटे बाद बीज को छानकर छाया में पानी को गिरने दे। करहर होने पर 30 ग्राम वेमिस्टिन पाउडर मिला कर भीगे हुए बोरा में बांधकर छायादार स्थान में 8–10 घंटे तक रख दें।
- अंकुरण पूर्व या अंकुरित बीज को 2–3 बीज 20 सेमी.–20 सेमी. यानी (8 ईंच 8 ईंच) की दूरी पर 1 ईंच से 1.5 ईंच की गहराई में बुवाई करने के साथ ही सही ढंग से बीज को मिट्टी से ढकें।
- बुवाई पूर्व खेत की अच्छी तरह से 3 बार जुताई करें। सुविधानुसार कम्पोस्ट/वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग करें। अंतिम जुताई के समय 27 किग्रा. डीएपी एवं 13.5 किग्रा. पोटाश खाद का प्रयोग करें। खेत में यदि जिंक की कमी हो तो 10 किग्रा. प्रति एकड़ जिंक का प्रयोग खेत की दूसरी जुताई के समय करें। खेत में यदि नमी नहीं हो तो सिंचाई करके खेत की तैयारी करें ताकि बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी उपलब्ध हो।
- बुवाई के 15 दिनों बाद खेत की सिंचाई करें। सिंचाई करते समय ध्यान रखें कि पानी की अधिकता न हो ताकि वे एक क्यारी से दूसरी क्यारी में बहने न लगे।
- खेत में नमी होते हुए ही 27 किलोग्राम यूरिया का छिड़काव कर छोटे कुदाल से दोनों ओर से कोड़ाई कर दें।
- प्रथम कोड़ाई एक सप्ताह के बाद फिर से पटवन कर दूसरी बार कोड़ाई करें।
- दूसरी कोड़ाई के 8 से 10 दिनों के बाद 13.5 किग्रा. यूरिया एवं 13.5 किग्रा. पोटाश खाद का प्रयोग करें, पुनः तीसरी कोड़ाई करें।
- गेहूं की तीसरी, चौथी, पांचवीं, एवं छठी सिंचाई क्रमशः 45, 60, 80 एवं 95 दिन पर करें।

उपरोक्त क्रियाओं को सुनिश्चित किया जाना ही एस.डब्ल्यू आई. विधि कहलाता है।

(लेखक सामुदायिक समन्वय जीविका परियोजना, बोधगया में कार्यरत हैं।)

हमारे आगामी अंक

अक्टूबर, 2009– ग्रामीण अर्थव्यवस्था–विकास की नई शक्ति (विशेषांक)।

नवम्बर, 2009– ग्रामीण ऋण व्यवस्था।

दिसम्बर, 2009– नरेगा–नए कदम, विषयों पर आधारित होंगे।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि, रोजगार व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे। उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं। पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम–1857
प्रकाशन विभाग की चुनिंदा पुस्तकें

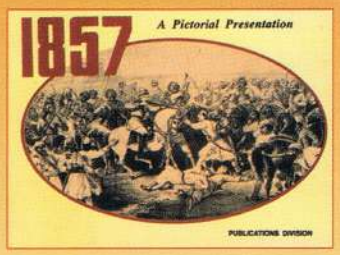

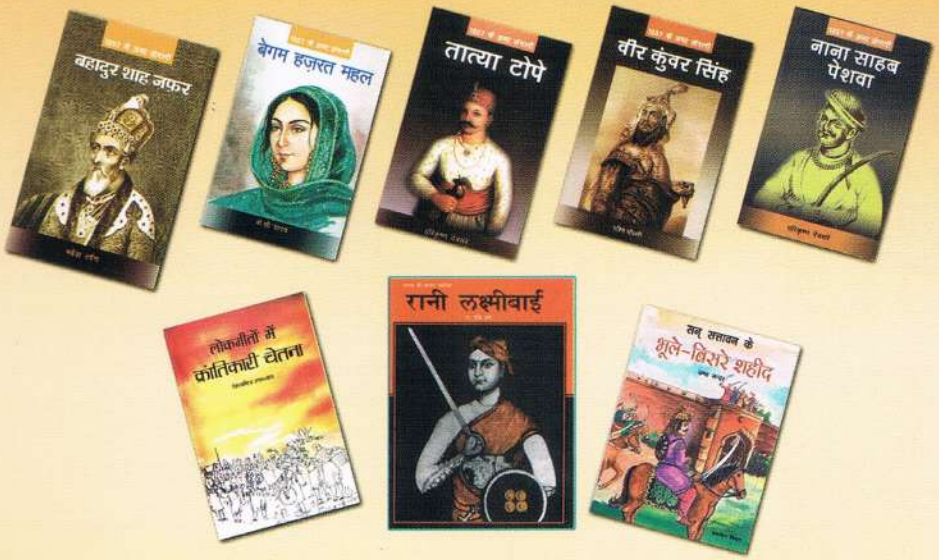

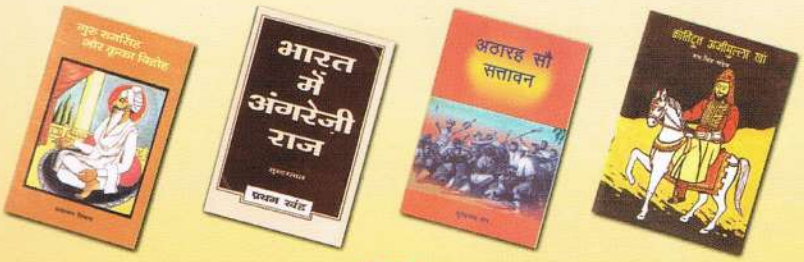

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली

विक्रय केंद्रः सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, **नई दिल्ली (24365610)** हाल नं0 196, पुराना सचिवालय, **दिल्ली** (23890205) सी–701, केंद्रीय सदन, बेलापुर, **नवी मुंबई** (27570686) 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, **कोलकाता** (22488030) राजाजी भवन, एफ एंड जी ब्लॉक, 'ए' विंग बेसेंट नगर, **चेन्नई** (24917673) बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, **पटना** (2683407) प्रेस रोड, निकट गवर्मेंट प्रेस **तिरुअनंतपुरम** (2330650) हाल नं.1, दूसरी मंजिल, केंद्रीय भवन, सेक्टर–एच, अलीगंज, **लखनऊ** (2325455) ब्लॉक नं. 4, गृहकल्प कॉम्प्लेक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, **हैदराबाद** (24605383) प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, **बंगलौर** (25537244) अम्बिका कॉम्प्लेक्स, प्रथम तल, पालदी, **अहमदाबाद** (26588669) हाउस नं. 07, न्यू कालोनी, चेनीकुथी, के.के.बी. रोड, **गुवाहाटी** (2885090)

ज्यादा जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट देखें – www.publicationsdivision.nic.in
e-mail:dpd@sb.nic.in, dpd@hub.nic.in

DPDB-H-09/9

आर. एन./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2009–11
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55/2006–08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2009-11
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना